निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

श्री सीतानाथ समारम्भां श्रीरामानन्दार्य मध्यमाम् । अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

भागवतानन्द का प्रथम आक्षेप -

जयपुर स्थित जगद्गुरु रामानन्दाचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय में धर्मशास्त्र विभाग के आचार्य मुकेश कुमार डागर द्वारा २८ मई, २०१२ को प्रकाशित श्री रामानन्द सम्प्रदाय विषयक शोधपत्र में यह कहा गया कि चतुः सम्प्रदाय में रामानुज सम्प्रदाय का नाम नही है और श्री सम्प्रदाय में श्री रामानन्दाचार्य जी की ही गणना होगी श्री रामानुजाचार्य जी की नहीं होगी !

प्रलापोद्धार -

भागवतानन्द जी आपके इस वक्तव्य को सुनने पर प्रथम दृष्टि में लगा कि आप ठीक से शोध पत्र पढ़ नही पाए किन्तु जब आपने पूरा वाक्य शोध पत्र से उद्धृत कर दिया तब हमको ये समझ आ गया कि आप जानकर भी इन वाक्यों के पीछे का कारण नही बताना चाहते। किन्तु फिर भी श्रीसीताराम जी और श्री रामानन्दाचार्य भगवान् की अनुकम्पा का आश्रय लेकर हम समस्त वैष्णव समाज में सत्य प्रकाशनार्थ आपके प्रलाप का उच्छेदन करते हैं -

सम्प्रदाय शब्दार्थः कारिकायाम् -

सम्यक् प्रकृष्ट दानं च मन्त्रादेः श्रुतिमूलकम्।
इत्यर्थः सम्प्रदायेति शब्दस्योक्तो महर्षिभिः॥[28]

अयं भावः वैदिकमन्त्राणां सारांशतत्वं जनानामुपकाराय यः उपदिशति स खलु संप्रदायः। प्रामुख्येन चत्वारो मन्यन्ते -
श्रीः, ब्रह्म, रुद्रः, सनकादिः। कलियुगे चत्वारो वेदान्तरहस्यमर्मज्ञाः सन्ति -
रामानन्दो निम्बादित्यो विष्णु स्वामी श्री माधवः।
चत्वारो भगवद्भक्ता जगतीधर्मस्थापकः॥
एतेषामनुयायिनो द्विपञ्चाशत् विजज्ञिरे॥

चतुर्युसम्प्रदायेषु श्रीसम्प्रदायाचार्यः जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यों वर्तते । सनकादि सम्प्रदायस्य श्री निम्बार्काचार्यः, रुद्र सम्प्रदायस्य श्री विष्णुस्वामी तथा च ब्रह्मसम्प्रदायस्य माध्वाचार्यः आसीत्। चतुः सम्प्रदायानां वैष्णवाः महाकुम्भे वैष्णवैः अनीः अखाड़ा इति पदवाच्यैः साकं प्रमुखं स्नानमाचरन्ति।
चतुःसम्प्रदायमध्ये श्री रामानुजस्य स्थानं नैवाङ्गीक्रियते। श्री सम्प्रदाये लक्ष्मीनारायणयोः उपासना भवति तथा चास्य सम्प्रदायस्य प्रवर्तकः श्रीरामानुजाचार्यः वर्तते। तत्रैव वैष्णव चतुः सम्प्रदाये रामानन्दस्य सम्प्रदायः

इसमें यह लिखा हुआ है कि वैष्णवों में चार मुख्य सम्प्रदाय हैं श्री, ब्रह्म, रूद्र और सनक सम्प्रदाय। इसके बाद उन्होंने कहा कि श्री सम्प्रदाय के मुख्याचार्य श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी हैं। और आगे कहा कि चतुः सम्प्रदाय में रामानुज सम्प्रदाय को ग्रहण नही किया जाता।

अब इसमें आपने केवल एक वाक्य उठा कर आक्षेप लगाकर कहा कि वे तो श्री सम्प्रदाय में रामानुजाचार्य को मानते ही नहीं हैं लेकिन उन्होंने इसी प्रकरण में आगे कहा "श्रीसम्प्रदाये लक्ष्मीनारायणयोः उपासना भवति" अर्थात श्री सम्प्रदाय में लक्ष्मी नारायण की उपासना होती है जिसके आचार्य रामानुज स्वामी हैं। उनके इस वाक्य से आपके प्रलाप (कि वे तो रामानुज सम्प्रदाय को श्री सम्प्रदाय मानते ही नहीं) इसका खण्डन हुआ।

अब जो उन्होंने चतुः सम्प्रदाय के मध्य श्री रामानुजाचार्य को ग्रहण न करने की बात कही है उसका कारण उसके पूर्व वाक्य से ही स्पष्ट है क्योंकि उन्होंने कहा -
कि वैष्णवों के चतुः सम्प्रदाय महाकुम्भ में अनी अखाड़ों के रूप से ग्रहण किये जाते हैं। उसमें रामानुज सम्प्रदाय का कोई स्थान नहीं है।

भागवतानन्द जी आपको पहले कुम्भ और चतुः सम्प्रदाय के विषय में पढ़कर के यह वक्तव्य देना चाहिए था। जब आपको वैष्णव सम्प्रदाय में अखाड़ों और द्वारों का कोई ज्ञान ही नहीं है तब आप किस अधिकार से यह आक्षेप किए सो तो आप जानें किन्तु आज हम आपको और समस्त वैष्णव समाज को शिक्षित अवश्य करेंगे कि अखाड़े और द्वारों का चतुः सम्प्रदाय में क्या महत्त्व है। अब आप ध्यानपूर्वक सुनें -

---

मध्यकाल में जब शैवों और वैष्णवों के मध्य सैद्धांतिक मतभेद बहुत प्रबल हो गए और वे एक दूसरों को मारने-काटने लगे उस काल में वाल्मीकीयावतार रामानंदीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय विभूषण कलिपावनावतार श्री गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने सबको श्रीरामचरितमानस रत्न प्रदान किया जिससे यह विवाद बहुत हद तक शांत हुआ किन्तु यह स्थिति दोबारा उनके जाने के बाद ज्यों की त्यों हो गयी और सभी वैष्णव सम्प्रदायों ने मिलकर इस पर एक बैठक की -

---

यह बैठक रामानन्दीय श्री वैष्णवों की सबसे बड़ी गद्दी श्री गलता गद्दी जयपुर में आयोजित कराइ गयी। इसमें प्रमुख रूप से उत्तर भारत के सभी वैष्णव सम्प्रदाय समुपस्थित हुए और इसमें प्रमुख भूमिका श्री हनुमान जी के अवतार चतुः सम्प्रदाय शाहंशाह उपाधि से समलंकृत श्री स्वामी बालानंदाचार्य जी महाराज ने निभाई। पूज्य स्वामी बालानंद जी की अध्यक्षता में ही चतुः सम्प्रदाय का संगठन बना और ५२ द्वारों की प्रतिष्ठा की गयी।

उसी काल में चतुः सम्प्रदायानुयायी वैष्णवों की उपासना पद्धति "श्री राम पटल" इसका निर्माण हुआ और इसमें ही यह श्लोक आया है -

रामानंदो निम्बादित्यो विष्णुस्वामी श्री माधवः।
चत्वारो भगवद्भक्ता जगतीधर्मस्थापकः॥
एतेषामनुयायिनो द्विपञ्चाशत् विजज्ञिरे॥

इसी समय पर शैवों से रक्षण करने के लिए अखाड़ों की भी रचना की गयी। इन अखाड़ों की रचना पूज्य श्री स्वामी बालानंदाचार्य जी महाराज ने की थी। इस सम्बन्ध में एक श्लोक प्राप्त होता है

अखण्ड संज्ञा संकेतः कृतो धर्म विवर्द्धये।
बालानन्द प्रभृतिभिः सम्प्रदायानुसारिभिः॥

हो सकता हो आपको हमारी बात समीचीन न लगे इसके लिए एक प्रमाण उद्धृत करते हैं -

नासिक कुम्भ विक्रमसंवत १७४६ श्रीरामकुण्ड के स्नान के ताम्रपत्र की नक़ल -

श्रीरामानन्दी निमानन्दी श्रीविष्णुस्वामी श्रीमध्वाचार्य जी चतुःसम्प्रदाय बावन द्वारा सात अखाड़ा श्रीगोदावरी काशी, संगम पर चक्रतीर्थ पर चढ़ाई हुयी। सं० १७४६ के सिंहस्थ में (१२०००) बारह हजार भेष मारा गया। अखाड़ा का आधा निशान कट गया। भूरादास भाँट मारा गया। खाकी अखाड़े के महान्त दयारामदासजी चित्रकूट वासी तथा महन्थ पुरुषोत्तमदासजी पेशवाई में कोरट करी सं० १८५८ में के सिंहस्थ में कोरट में हुकुम हुआ कि नासिक रामकुण्ड में वैरागी स्नान करें। त्रिमुख कुशावर्त में गोसाई स्नान करें।

इस ताम्रपत्र की नक़ल से यह स्पष्ट है कि उस काल में शैव वैष्णव विवाद अपनी चरम सीमा पर था। उस समय रामानन्दीय श्री वैष्णव सम्प्रदाय के नेतृत्व में ही शैवों से वैष्णवों का रक्षण किया गया। इसके लिए कई चतुः सम्प्रदायानुयायी निर्दोष वैष्णवों ने प्राणाहूति दी।

---

५२ वैष्णव द्वारों का अस्तित्व प्राचीन काल में वैष्णव उपासना करने वाले ऋषियों से रहा है। उन्ही वैष्णव ऋषियों के गोत्र से अपनी परम्परा स्थापित कर के ५२ द्वारों को चतुः सम्प्रदाय में विभाजित किया गया। जो रामोपासक ऋषि थे उनके स्थानों को रामानन्द सम्प्रदाय को सौंपा गया और जो कृष्णोपासक ऋषि थे उनके स्थान को अन्य ३ कृष्णोपासक सम्प्रदायों को। इस प्रकार -

१. रामानन्द सम्प्रदाय के ३६ द्वारे हुए

२. निम्बार्क सम्प्रदाय के ९ द्वारे हुए

३. विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के ५ द्वारे हुए

४. माध्व सम्प्रदाय के २ द्वारे हुए

रही बात अनी और अखाड़ों की तो चतुः सम्प्रदाय में ३ अनियाँ हैं -

१. निर्मोही २. दिगम्बर ३. निर्वाणी

यही तीन अनियाँ आगे ७ अखाड़ों में बंटी हुई हैं

१. दिगम्बर अखाड़ा

२. निर्वाणी अखाड़ा

३. निर्मोही अखाड़ा

४. खाकी अखाड़ा

५. निरालम्बी अखाड़ा

६. संतोषी अखाड़ा

७. महानिर्वाणी अखाड़ा

इन अखाड़ों में ही चतुः सम्प्रदाय के वैष्णव साधु सन्त अपने अपने संगठनों के अंदर परिगणित होते हैं। इन अखाड़ों के परम पवित्र ध्येय, ज्ञेय श्रीराम, कृष्ण ही हैं। सभी अनियों की उपासना श्रीराम, श्रीकृष्ण की है।

निर्मोही अनी में - श्री श्रीरामानन्दीय निर्मोही, श्रीरामानन्दीय महानिर्वाणी, श्रीरामानन्दीय संतोषी नामक अखाडों में श्री रामोपासना की प्रधानता है।

विष्णु स्वामी निर्मोही, मालाधारी निर्मोही, राधावल्लभीय निर्मोही, गौड़िया निर्मोही, हरिव्यासी महानिर्वाणी, हरिव्यासी संतोषी अखाड़ों में श्रीकृष्णोपासना की प्रधानता है।

निर्वाणी अनी में श्रीरामानन्दीय निर्वाणी, श्रीरामानन्दीय खाकी, श्रीरामानन्दीय निरालम्बी अखाड़े श्रीरामजी के तथा हरिव्यासी निर्वाणी, बलभद्री निर्वाणी, हरिव्यासी खाकी और टाटम्बरी अखाड़े में श्रीकृष्ण के उपासक हैं।

श्रीरामकृष्ण उपासना सम्बन्ध से श्री ब्रह्म रुद्र सनक ये चार श्रीवैष्णव सम्प्रदाय जगत प्रसिद्द हैं इनके अतिरिक्त जो वैष्णव सम्प्रदाय (राधावल्लभीय सम्प्रदाय, गौड़ीयसम्प्रदाय, हरिव्यासीसम्प्रदाय आदि) इन्ही में अन्तर्निहित हैं। इन सम्प्रदायों में मन्त्र, इष्ट, उपास्य, क्षेत्र, शाखा, मुक्ति आदि के अनेक भेद हैं।

इन अखाड़ों और चतुः सम्प्रदाय का जो संगठन है उसमें रामानुज सम्प्रदाय का कोई स्थान नही है और इसलिए ही वे चतुः सम्प्रदाय का जो संगठन महाकुम्भ में प्रति द्वादश वर्ष होता है उसमें उन्हें शाही स्नान का कोई अधिकार नहीं है और न ही उनके कोई अखाड़े हैं और न कोई द्वारे।

इसलिए उक्त प्रमाणों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि रामानुज सम्प्रदाय महाकुम्भ में जो चतुः सम्प्रदाय का संगठन है उसमें परिगणित नही होता तब इस शोध पत्र में जो भी लेखक ने लिखा वह सत्य ही लिखा न कि असत्य! आपको ज्ञान नहीं था तो कम से कम किसी प्रामाणिक रामानन्दीय श्रीवैष्णव से तो इस विषय में आपको विमर्श करना चाहिए था। इस प्रकार चिल्ल पों मचाने का कोई लाभ आपको नहीं हुआ!

आगे आपने अपनी ओर से निराकरण देते हुए कहा कि जो शोधपत्र के अनुसार रामानुज सम्प्रदाय को श्री सम्प्रदाय में नही कहा गया (जो कि वास्तव में कहा नही गया था) उसके लिए आपने गर्ग संहिता का प्रमाण उद्धृत किया जो इस प्रकार है -

गर्ग संहिता अश्वमेध खण्ड, अध्याय ६१, श्लोक संख्या २२ से २६

वामनश्च विधिः शेषः सनको विष्णुवाक्यतः॥ धर्मार्थ हेतवेचेतेभविष्यंतिद्विजाः कलौ॥२३॥
विष्णुस्वामीवामनशिस्तथामाध्वस्तुब्रह्मणः॥ रामानुजस्तुशेषांशोनिंबार्क सनकस्यच॥२४॥
एतेकलौ युगे भाव्याः संप्रदायप्रवर्त्तकाः॥ संवत्सरेविक्रमस्यचत्वारः क्षितिपावनाः॥२५॥
संप्रदायविहीनाये मन्त्रास्ते निष्फलाः स्मृताः। तस्माच्चगमनह्यस्तिसंप्रदायेनरैरपि॥२६॥

भागवतानन्द जी! आपने सोचा होगा कि रामानन्दी साधक तो बस भण्डारा करना जानते हैं पढाई लिखे तो करते नही होंगे लेकिन आपके मस्तिष्क ज्वर को आज हम अवश्य शांत करके रहेंगे अब आप तर्क को सुनिए -

---

प्रथम ही हम कह आये हैं कि शोधपत्र जिन्होंने लिखा है उन्होंने रामानुज सम्प्रदाय को भी श्री सम्प्रदाय लिखा है तब आपका यह निराकरण देना ही व्यर्थ है क्योंकि हम रामानन्दीय श्रीवैष्णव तो रामानुजपरम्परा को भी श्री सम्प्रदाय मानते हैं क्योंकि उनकी परम्परा श्री लक्ष्मी से है और हमारी परम्परा श्री जानकी माता से है इसलिए हम भी श्री सम्प्रदाय हैं और वो भी किन्तु दोनों की परम्परा में महान भेद हैं।

अब गर्ग संहिता के इस श्लोक का विवेचन करते हैं -

१. इस श्लोक में कहा है कि मध्वाचार्य ब्रह्मा जी के अवतार हैं किन्तु यह तो सत्य ही नहीं है वे तो वायु-भीम-हनुमान जी के सम्मिलित अवतार थे ऐसी उनके सम्प्रदाय में प्रसिद्धि है। और भी निम्बार्क स्वामी को सनक का अवतार बताया गया जबकि उनकी साम्प्रदायिक प्रसिद्धि सुदर्शनावतार इस रूप में है। और अंतिम श्लोक में कहा कि ये सभी आचार्य विक्रमसंवत्सर में होंगे वह भी गलत ही है क्योंकि विष्णु स्वामी का प्राकट्य कलि के प्रारम्भिक वर्षों में माना जाता है और इसी प्रकार निम्बार्क सम्प्रदाय भी श्रीनिम्बार्काचार्य जी को शंकराचार्य जी से भी पूर्व का स्वीकार करते हैं तब ये विक्रम संवत्सर में होंगे इस श्लोक को जिसने भी ग्रन्थ में प्रक्षेपित किया है उसने भारी गलतियां कर दी हैं जो कोई भी सामान्य वैष्णव समझ लेगा।

यह श्लोक गर्ग संहिता के दसवें खण्ड में प्राप्त होता है परन्तु प्राचीन हस्तलिखित प्रतिलिपियों में यह खण्ड ही नही प्राप्त होता। सन १९१२ में सर्वप्रथम जो प्रति वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई से छपी है उसमें यह खण्ड सबसे प्रथम दिखाई देता है इससे पूर्व की किसी भी प्रति में यह खण्ड ही प्राप्त नहीं है यदि आपके पास हो तो आप भेजने का कष्ट करें।

प्रमाण के लिए हम उन पांडुलिपियों को भी प्रस्तुत कर रहे हैं -
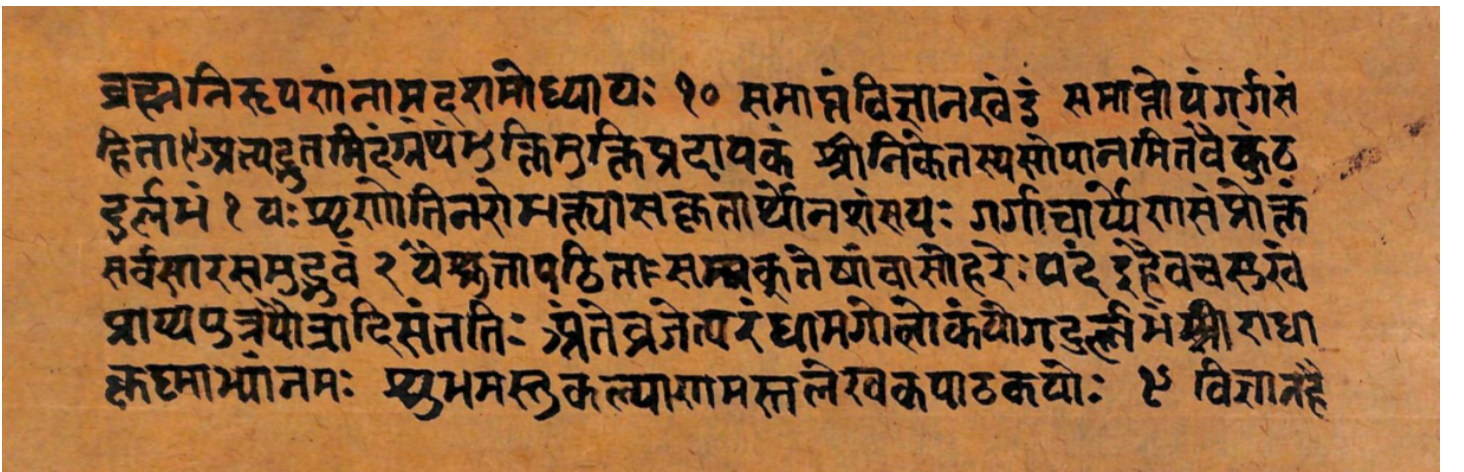
यह पाण्डुलिपि पंजाब विश्वविद्यालय के निजी संग्रह में रखी हुई है

इस पाण्डुलिपि में विज्ञान खण्ड की समाप्ति के बाद ही ग्रन्थ का समाप्त होना लिखा है तब दशम अर्थात अश्वमेध खण्ड की प्रामाणिकता पर भारी संदेह खड़ा हो जाता है।

एक और पाण्डुलिपि यही(पंजाब विश्वविद्यालय के निजी संग्रह) से ही प्राप्त होती है उसमें तो केवल बलभद्र खण्ड अर्थात ८वें खण्ड की समाप्ति पर ग्रन्थ की समाप्ति कर दी गयी है ।
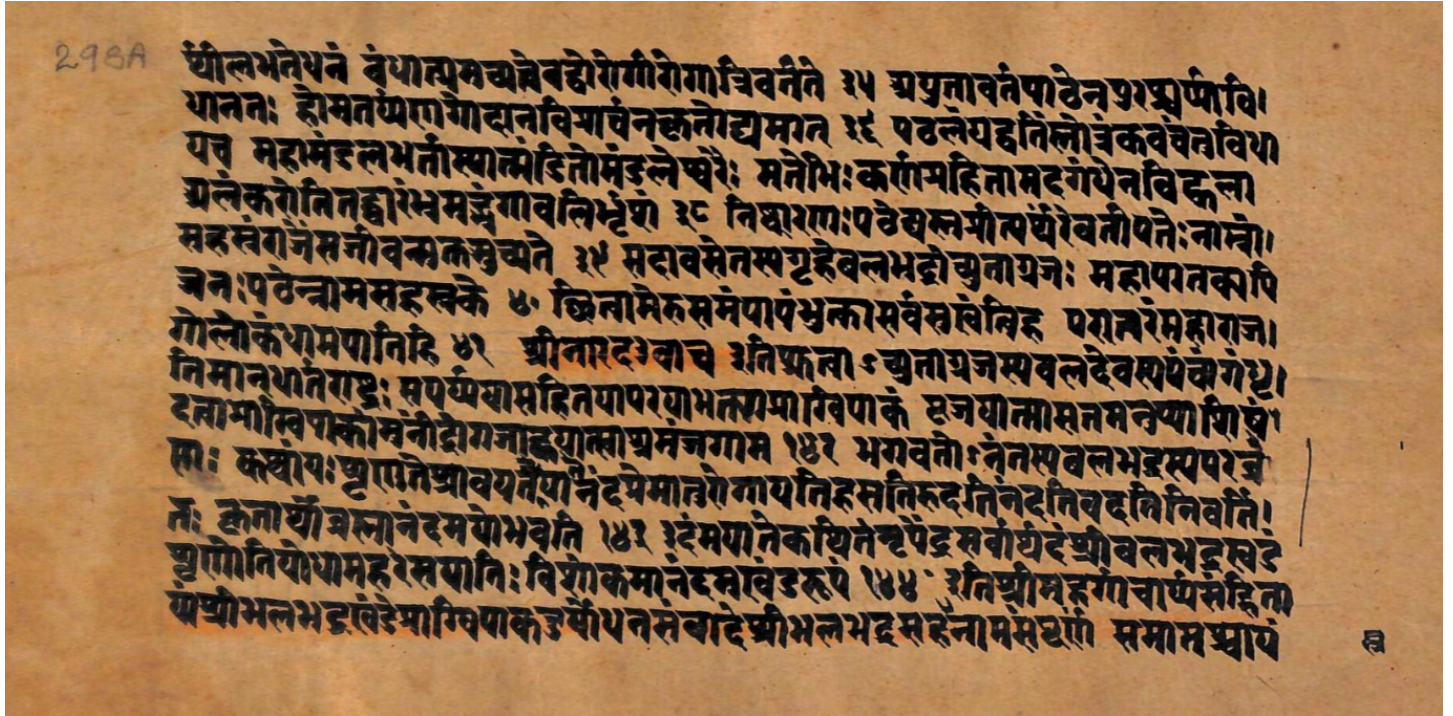
इसके अतिरिक्त एक और पाण्डुलिपि प्राप्त होती है उसमें भी विज्ञान खण्ड(नौवें खण्ड) तक की ही चर्चा है। यह पाण्डुलिपि लाल बहादुर स० वि० के निजी संग्रह में रखी हुई है ।

ग०सं०
२३०

रीप्यखुरं सवत्सं ददातिखंडंप्रतिगोद्वयंसः प्राप्नोतिसर्वंहिमनोरथंसः ३२ निष्कारणोसौम्प्रएतेविदेह-
राट् सर्वामिमांवैमुनिगर्गसंहितां त्वत्पुंडरीकेवसतेस्वसर्वदा श्रीकृष्णचंद्रोनिजभक्तवत्सलः ३३
श्रीगर्गउवाच इत्युक्त्वातमनुज्ञाप्यनारदोदेवदर्शनः सर्वेषांपश्यतांब्रह्मन्नंबरंगतवान्मुनिः ३४ बहु-
लाश्वोमहाराजः श्रीकृष्णेलग्नमानसः सर्वतस्तुकृतार्थोभूच्छ्रुत्वेमांसंहितांहरेः ३५ तवप्रश्नोपरिब्रह्म
न्कथितासंहितामया श्रुत्वावापाठिताकोटियज्ञफलप्रदा ३६ श्रीशौनकउवाच धन्योहंच
कृतार्थोहंत्वत्संगेनमहामुने प्राप्नोमिपरमांभक्तिंश्रीकृष्णप्रेमवर्द्धिनीं ३७ विशदत्हृदिमुनीनांमानसे
राजहंसः सकलसुखविराजन्नादमाधुर्य्यवंशः जगतिविचलदंशः शूरवंशावितंसः करबलहतकंसः पा
तुवःसत्प्रशंसः ३९ इत्युक्त्वातान्मुनीन्सर्वान्गर्गाचार्योमहामुनिः अनुज्ञाप्यप्रसन्नात्मागंतुमभ्युदितोभ
वत् ४० नवसर्गविसर्गाढ्यास्वर्गभूर्दुर्गसंहिता चतुर्वर्गप्रदामुक्ता गर्गांग गंगाचलंययौ ४१ शरदिक
चपंकजश्रियमतीवविदूषकं मिलिंदमुनिलेढितंकुलिशकंजचिह्नावृतम् स्फुरत्कनकनूपुरंदलितभक्ततापत्र
यं चलद्युतिपदद्वयंहृदिदधामिराधापतेः ४२ इतिश्रीमद्गर्गाचार्यसंहितायांविज्ञानखंडेश्रीनारदबहु
लाश्वसंवादांतर्गतव्यासोग्रसेनसंवादे परमब्रह्मनिरूपणंनामदशमोध्यायः १० विज्ञानखंडसमाप्तम्
खंड १ ६ ६ ६ ६ ६ ६ ६ ६ ६

वि०ख०
१०

२३०

इन सब प्रमाणों के आधार पर यह प्रतीत होता है कि केवल यह श्लोक ही नही प्रत्युत पूरा अश्वमेध खण्ड ही बाद में जोड़ा गया है यदि किसी के पास कोई पुरानी पाण्डुलिपि में यह खण्ड उक्त श्लोक सहित प्राप्त होता हो तो वह अवश्य सूचित करें हम उसे सहर्ष स्वीकार करेंगे।

ऐसे में जो पहले से संदिग्ध है उसको प्रमाण कोटि में ग्रहण करना समीचीन पक्ष नहीं है अस्तु आपके प्रथम आक्षेप का सम्पूर्ण खण्डन हमने श्री सीतारामजी, श्री रामानन्दाचार्य जी एवं हमारे पूज्य श्री गुरुदेव की कृपा से करने का प्रयास किया है। हमारा आपसे कोई व्यक्तिगत विरोध नहीं किन्तु आपने जो आक्षेप हमारी परम्परा पर किए हैं उनका खण्डन करना यह हमारा कर्तव्य है और इसलिए हम पूर्ण रूप से इसको सम्पादित करेंगे।

यह एक श्रृंखला है जिसमें इस पहली वीडियो में आपके प्रथम आक्षेप का विधिवत खण्डन किया गया। दूसरे भाग में आपके दूसरे प्रलाप का उद्धार किया जाएगा तब तक के लिए आपको और सभी वैष्णव वृन्द को श्री सीताराम !

निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

श्री सीतानाथ समारम्भां श्रीरामानन्दार्य मध्यमाम् । अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

भागवतानन्द का द्वितीय आक्षेप -

जब आप(शोध पत्र के आधार पर) यह कहते हैं कि रामानुजाचार्य जी की परम्परा वाले श्री संप्रदाय के अंतर्गत श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी नही आते हैं तब समस्या यह हो जाती है कि हमें वृन्दावन के संतों से सुनने को मिला कि मलूकपीठाधीश्वर जी के गुरु श्री भक्तमाली जी जब भक्तमाल का अंकन करा रहे थे उस समय पर कई रामानंदियों ने कहा कि यहां पर "रामानन्द पद्धति प्रताप" ऐसा पाठ रखना चाहिए तब उन्होंने प्राचीन प्रतियों के आधार पर "रामानुज पद्धति प्रताप" इस पाठ को ही रखा और विरोध होने के कारण "रामानन्द पद्धति प्रताप" ऐसा भी रख दिया तब उन्होंने फुटनोट में इस पाठ को भी रख दिया। ऐसी स्थिति में यह कहना कि "रामानन्द पद्धति प्रताप" यही असली पाठ है और "रामानुज पद्धति प्रताप" असली पाठ नही ऐसा संभव कैसे हो सकता है क्योंकि आज तक तो रामानन्दी महात्मा ही उसे छपाते और मनन-चिंतन करते आये हैं रामानन्दाचार्य जी के रहते ऐसा विक्षेप कैसे उत्पन्न हो गया है संप्रदाय में और रामानन्दी मठों में पूर्व से ही आलवन्दार स्तोत्र आदि का पाठ होता आया है। अस्तु रामानुज सम्प्रदाय और रामानन्द सम्प्रदाय का ऐक्य इन सब तथ्यों से सिद्ध होता है ।

प्रलापोद्धार -

भागवतानन्द जी ! लगता है कि आपने तथ्यों के प्रामाणिक शोधन के बिना ही किसी की कही हुई सुनी हुई बात को सामने रख कर अपनी प्रमाणिकता पर ही प्रश्न चिन्ह खड़े कर दिए हैं। किसी की कही हुई बात को प्रमाण कैसे माना जा सकता है जब तक आपने स्पष्टीकरण न लिया हो स्वयं भक्तमाली जी से अथवा किसी लेख से अथवा मलूकपीठ के आचार्यचरण से ? भागवतानन्द जी ! प्रमाण क्या हो सकता है और क्या नही इसका थोड़ा अध्ययन करें आप ! क्योंकि आपके इस निराधार आक्षेप का खण्डन करना भी हास्यास्पद प्रतीत हो रहा है फिर भी श्री युगल सरकार, आनन्दभाष्यकार भगवान और पूज्य श्रीगुरुदेव के चरणकमलों का आश्रय लेकर हम आपके इस निरर्थक आक्षेप का युक्तिपूर्ण खण्डन करते हैं -

आपने कहा कि "श्रीरामानुज पद्धति प्रताप" यही पाठ अधिक समीचीन है क्योंकि रामानन्दी ही अबतक इसे छपवाते आये हैं किन्तु आपका यह अनुमान मिथ्यापूर्ण है कि सभी रामानन्दी "श्रीरामानुज पद्धति प्रताप" यही पाठ छपवाते आये हैं। भक्तमाल पर जो सबसे अधिक प्रामाणिक संस्करण है उसे श्री जानकी दास श्रीवैष्णव जी ने जयपुर से ८० वर्ष पूर्व छपाया जिसमें कतिपय प्राचीन पांडुलिपियों के पाठ को देखकर इस पाठ को रखा गया है। इसकी भूमिका में डॉ. बलदेव उपाध्याय जो वाराणसी संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति थे उनकी सुसम्मति है जिसमें उन्होंने इसे सभी संस्करणों में परम प्रामाणिक और सबसे विशद व्याख्या होना स्वीकार किया है। इस सम्मति को सबके ज्ञान वर्धन के लिए प्रस्तुत कर रहा हूँ -

---

Director

Research Institute

Varanasi Sanskrit University

मैंने भी जानकीदासजी श्रीवैष्णव द्वारा सम्पादित 'भक्तमाल' को यत्रतत्र देखा । ग्रन्थ बड़े परिश्रम तथा मनोयोग के साथ सम्पादित किया गया है। प्रियादास जी की प्रख्यात टीका के साथ यह ग्रन्थ पहिले भी प्रकाशित था, परन्तु यह संस्करण इतः पूर्व संस्करणों से अनेक अंश में विशिष्ट है । सम्पादक ने मूल तथा टीका के पाठ संशोधन के निमित्त अनेक प्राचीन हस्तलेखों का भी इसमें विवेक के साथ उपयोग किया है । साथ ही साथ जिन महात्मानों के विषय में प्रियादास जी मौन हैं अथवा स्वल्पाक्षर में ही विवरण दिया है, उनका विवरण यहाँ विशेष रूप से श्री जानकीदास जी ने दिया है । इस प्रकार यह नूतन संस्करण मूल के उपबृंहण के साथ ही साथ प्रियादास जी की टीका का भी उपबृंहण प्रस्तुत करता है । ऐसे सुन्दर तथा विद्वत्तापूर्ण, प्रामाणिक तथा सुविशुद्ध संस्करण के प्रस्तुतकर्ता जानकीदास जी भक्तों तथा साहित्य रसिकों के धन्यवाद के समुचित पात्र हैं । मैं इस ग्रन्थ के बहुल प्रचार की कामना करता हूँ ।

बलदेव उपाध्याय

वाराणसेय-संस्कृत-विश्वविद्यालयः
श्रुतम् मे गोपाय

Director
RESEARCH INSTITUTE
VARANASI SANSKRIT UNIVERSITY

VARANASI - 2
२३ ।....६ ।....196५

मैंने श्री जानकीदासजी श्रीवैष्णव द्वारा सम्पादित 'भक्तमाल' को यत्रतत्र देखा। ग्रन्थ बड़े परिश्रम तथा मनोयोग के साथ सम्पादित किया गया है। प्रियादास जी की प्रख्यात टीका के साथ यह ग्रन्थ पहिले भी प्रकाशित था, परन्तु यह संस्करण इतः पूर्व संस्करणों से अनेक अंश में विशिष्ट है। सम्पादक ने मूल तथा टीका के पाठ संशोधन के निमित्त अनेक प्राचीन हस्तलेखों का भी इसमें विवेक के साथ उपयोग किया है। साथ ही साथ जिन महात्माओं के विषय में प्रियादास जी मौन हैं अथवा स्वल्पाक्षर में ही विवरण दिया है, उनका विवरण यहाँ विशेष रूप से श्री जानकीदास जी ने दिया है। इस प्रकार यह नूतन संस्करण मूल के उपबृंहण के साथ ही साथ प्रियादास जी की टीका का भी उपबृंहण प्रस्तुत करता है। ऐसे सुन्दर तथा विद्वत्तापूर्ण, प्रामाणिक तथा सुविशुद्ध संस्करण के प्रस्तुतकर्ता जानकीदास जी भक्तों तथा साहित्य रसिकों के धन्यवाद के समुचित पात्र हैं। मैं इस ग्रन्थ के बहुल प्रचार की कामना करता हूँ।

बलदेव उपाध्याय

इस प्रति में "श्रीरामानन्द पद्धति प्रताप" यही पाठ लिया गया है यथा प्रमाण -

(पूर्वाचार्यों सहित भगवत्पाद श्रीरामानन्दाचार्य स्वामीजीकी कथा)

मूल० छ०—देवाचारज द्वितीय महा-
महिमा हर्यानँद। तस्य राघवानन्द भये
भक्तनको मानद। पत्रावलम्ब पृथ्वी
करी व काशी स्थाई। चार वरण आश्रम
सबहीको भक्ति दृढाई॥ तिनके रामा-
नँद प्रकट, जगमङ्गल जिन वपुधरचो।
रामानँद पद्धति प्रताप, अवनि अमृत
ह्वै अनुसरचो॥३५॥

और भी छप्पय २८ में आनंदभाष्यकार जगद्गुरु स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज को चतुः सम्प्रदाय में श्री सम्प्रदाय का परमाचार्य स्वीकार किया है -

(वैष्णव चतुः सम्प्रदाय प्रधानाचार्यावतार वर्णन)

मूल छ०—रामानन्द उदार सुधानिधि अवनि कल्पतरु। विष्णुस्वामि बोहित्थ सिन्धु संसार पार करु। माध्वाचारज

१ समय। २ प्रेममय।

भक्तमाल [मूल २७-२९

६८

मेघ भक्तिसर ऊसर भरिया। निम्बादित आदित्य कुहर अज्ञान जु हरिया॥ जग जनमि भागवत धर्मकर, सम्प्रदाय थापे अघट। चौबीस प्रथम हरि वपु धरे, त्यों चतुर्व्यूह कलियुग प्रकट॥२८॥

दोहा—रामानँद श्रीपद्धती, विष्णु स्वामि त्रिपुरारि। निम्बादित सनकादिका, मधुकर गुरु मुख चारि॥२९॥

भक्तमाल के इस संस्करण की भूमिका में जानकीदास जी ने उद्धृत किया है कि यह भक्तमाल संस्करण जानकी घाट निवासी पंडित रामवल्लभाशंरण जी महाराज, उनके शिष्य पूज्य पण्डित

स्वामी अखिलेश्वरदास जी महाराज, मनसतत्त्वान्वेषी पण्डित श्री रामकुमारदास रामायणी जी महाराज, बड़ीजगह बड़ास्थान दशरथमहल के तत्कालीन महन्त जी, जानकीघाटनिवासी दार्शनिक सार्वभौम पूज्य श्री वासुदेवाचार्य जी महाराज प्रभृति कतिपय रामानन्दीय श्रीवैष्णव आचार्यों की सम्मति से प्रकाशित हुआ है।

युक्तियों और तर्कों से खण्डन-
श्री स्वामी नाभादास जी परम गुरु भक्त थे। उनकी गुरु भक्ति के कारण ही उन्हें इस भक्तमाल को लिखने की आज्ञा अपने गुरुदेव से प्राप्त हुई। इसके फलस्वरूप ही उन्होंने भक्तों का चरित्र लिखा। यदि "रामानुज पद्धति प्रताप" इस पाठ को श्री नाभादास जी का लिखा हुआ मानलें तो उनकी गुरुभक्ति पर ही बहुत बड़ा प्रश्न चिन्ह आप खड़ा कर रहे हैं क्योंकि -

---

श्री अग्रदेवाचार्य जी महाराज ने स्वरचित "श्रीराममन्त्रराजपरम्परा" में अपने गुरुदेव श्री कृष्णदासपयोहारीजी महाराज और उनके गुरुदेव पूज्य जगद्गुरु श्रीस्वामी अनन्तानंदाचार्य जी महाराज का संवाद प्रस्तुत किया है जिसमें राम मंत्र की परम्परा का रहस्य उपदेश किया गया है यथा प्रमाण-

---

श्रीमान् अग्रदास उवाच-

शुभासने समासीनमनन्तानन्दमच्युतम्। कृष्णदासो नमस्कृत्य पप्रच्छ गुरुसन्ततिम्॥१॥

श्री कृष्णदास उवाच-

भगवन्यतीनां श्रेष्ठ! प्रपन्नोऽस्मि दयां कुरु।

ज्ञातुमिच्छाम्यहं सर्वां पूर्वेषां सत्परम्पराम्॥२॥

मन्त्रराजश्च केनादौ प्रोक्तः कस्मै पुरा विभो।

कथञ्च भुवि विख्यातो मन्त्रोऽयं मोक्षदायकः॥३॥

श्रीमान् अग्रदास उवाच-

कृष्णदासवचः श्रुत्वाऽनन्तानन्दो दयानिधिः।

उवाच श्रूयतां सौम्य! वक्ष्यामि तद्यथाक्रमम्॥४॥

श्रीमान् अनन्तानन्द उवाच-

परधाम्नि स्थितो रामः पुण्डरीकायतेक्षणः। सेवया परया जुष्टो जानक्यै तारकं ददौ॥५॥

श्रियः श्रीरपि लोकानां दुःखोद्धरणहेतवे। हनूमते ददौ मन्त्रं सदा रामाङ्घ्रिसेविने॥६॥

ततस्तु ब्रह्मणा प्राप्तो मुह्यमानेन मायया। कल्पान्तरे तु रामो वै ब्रह्मणे दत्तवानिमम् ॥७॥

मन्त्रराजजपं कृत्वा धाता निर्मातृतां गतः। त्रयीसारमिमं धातुर्वशिष्ठो लब्धवान् परम् ॥८॥

पराशरो वशिष्ठाच्च सर्वसंस्कारसंयुतम्। मन्त्रराजं परं लब्ध्वा कृतकृत्यो बभूव ह ॥९॥

पराशरस्य सत्पुत्रो व्यासः सत्यवती सुतः। पितुः षडक्षरं लब्ध्वा चक्रे वेदोपबृंहणम् ॥१०॥

व्यासोऽपि बहुशिष्येषु मन्वानः शुभयोग्यतम्। परमहंसवर्याय शुकदेवाय दत्तवान् ॥११॥

शुकदेवकृपापात्रो ब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः। नरोत्तमस्तु तच्छिष्यो निर्वाणपदवी गतः ॥१२॥

स चापि परमाचार्यो गंगाधराय सूरये। मन्त्राणां परमं तत्वं राममन्त्रं प्रदत्तवान् ॥१३॥

गंगाधरात्सदाचार्यस्ततो रामेश्वरो यतिः। द्वारानन्दस्ततो लब्ध्वा परब्रह्मरतोऽभवत् ॥१४॥

देवानन्दस्तु तच्छिष्यः श्यामानन्दस्ततोऽभवत्। तत्सेवया श्रुतानन्दश्चिदानन्दस्ततोऽभवत् ॥१५॥

पूर्णानन्दस्ततो लब्ध्वा श्रियानन्दाय दत्तवान्। हर्यानन्दो महायोगी श्रियानन्दाङ्घ्रि सेवकः ॥१६॥

हर्यानन्दस्य शिष्यो हि राघवानन्द देशिकः। यस्य वै शिष्यतां प्राप्तो रामानन्दः स्वयं हरिः ॥१७॥

तस्माद् गुरुवराल्लब्ध्वा देवानामपि दुर्लभम्। प्रादात्तुभ्यमहं तात गुह्यं तारकसंज्ञकम् ॥१८॥

एवं परम्परा सौम्य प्रोक्ता श्रीसम्प्रदायिनाम्।

मन्त्रराजस्य चाख्यातिर्भूम्यामेवमवातरत् ॥१९॥

तो जब स्वयं श्री अनन्तानन्दाचार्य जी महाराज ने यह रामानन्दीयश्रीवैष्णव गुरुपरम्परा श्री कृष्णदासपयोहारी जी को उपदेश किया और इसी को लिपिबद्ध श्री अग्रदेवाचार्य जी महाराज ने किया तब उनके शिष्य नाभादास जी महाराज श्री रामानन्दाचार्य भगवान को श्री रामानुज सम्प्रदाय का अनुयायी किसी प्रकार कहेंगे अस्तु युक्ति और तर्क यह कहता है कि परमगुरुनिष्ठ श्रीनाभादास जी ने इसे नही लिखा। यदि कहो कि धर्मग्रन्थ में युक्ति और तर्क लगाना असमीचीन है तो ऐसा नही क्योंकि शास्त्र ही कहते हैं -

केवल शास्त्रमालोक्य न कर्तव्यो विनिर्णयः। युक्ति हीन विचारे तु धर्म हानिः प्रजायते ॥

पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम्।

सन्तः परीक्ष्यान्मतरद् भजन्ते मूढः पर प्रत्ययनेय बुद्धिः॥

मनुजी ने भी कहा है कि -

आर्ष धर्मोपदेशं च वेद शास्त्राविरोधिना। यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः ॥

अतः जो पद्य वा श्लोक सम्प्रदाय के सिद्धान्तों, विचारों, आचारों एवं ग्रन्थों के विरुद्ध हों तथा सम्प्रदाय के व्यवहारों के विरुद्ध हों वे प्रामाणिक नही माने जा सकते।

अब ऊपर कहे वाक्यों को प्रमाणित करने के लिए हम और एक प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। श्रीनाभादास जी महाराज ने एक और ग्रन्थ लिखा है "श्रीरामाष्टयाम"। इस ग्रन्थ में उन्होंने क्या कहा है ये देखिये -

८० ❀ श्रीनाभाजी कृत अष्टयाम ❀

आठ मंजरी प्रभु की प्यारीं।
जे छिन कबहुं होत नहिं न्यारीं ॥२६६॥
षोड़स अर्ध वहो कम रहैं।
दंपति अंतर ग्रह सुख लहैं ॥२६७॥
तिन प्रभु भुक्त शेष जब पायो।
अति आदर सिर नैननि लायो ॥२६८॥
तिनकी लघु चेरी इक अहै।
रस मंजरी चरण ढिग रहै ॥२६९॥
जथा काल बहु रूप बनावै।
जो जस लायक तहँ पहुँचावै ॥२७०॥
निज प्रसाद करि सब तेहि देहीं।
अति अनुराग शीश धरि लेहीं ॥२७१॥
ले प्रसाद बहु रूप बनावैं।
थार चौक मज्जन करवावैं ॥२७२॥
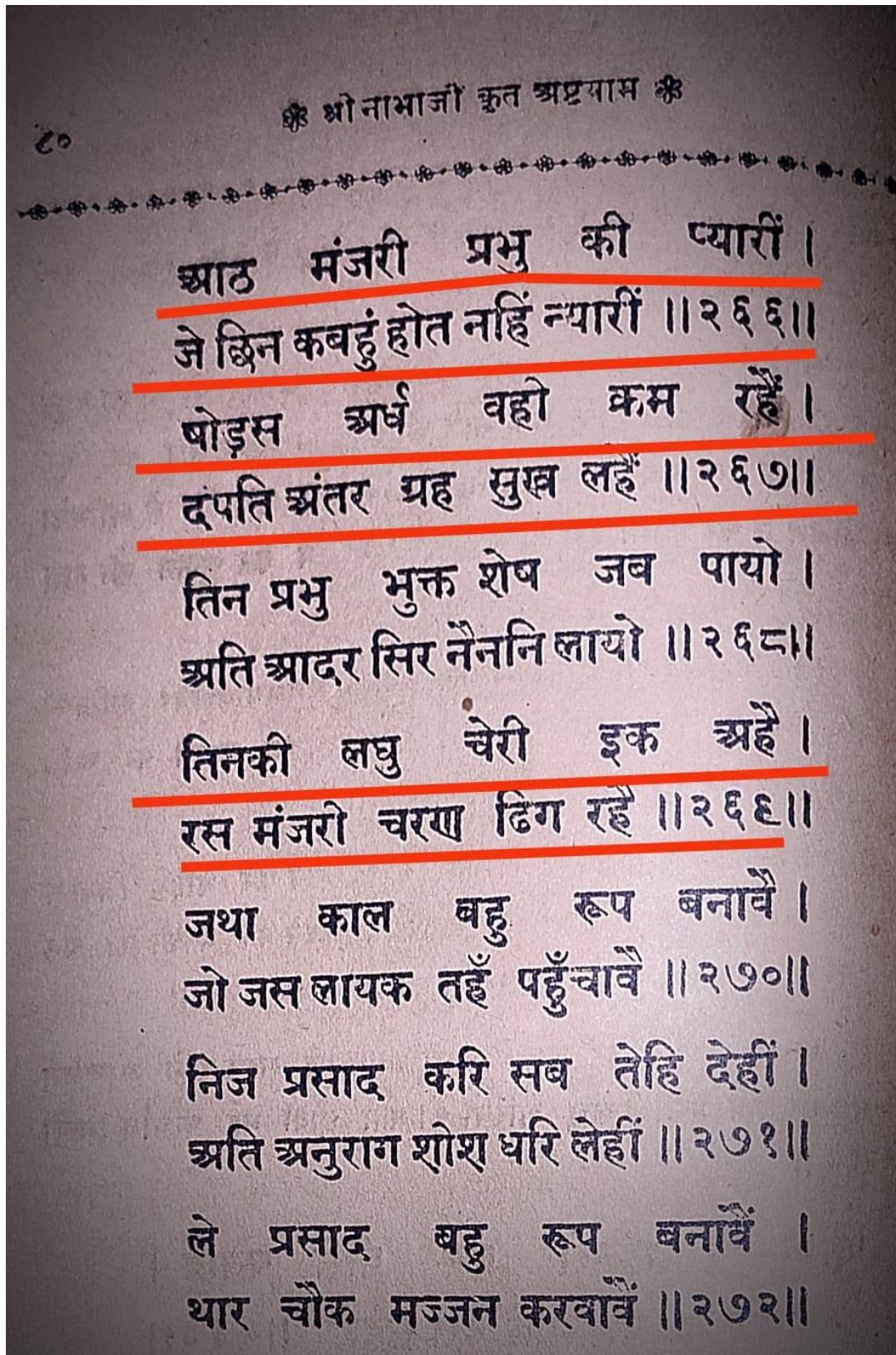
श्री स्वामी नाभादास जी कहते हैं कि अखिलकोटिब्रह्माण्डनायक, द्वयविभूति के स्वामी, श्री रघुनाथ जी सदैव अष्ट मंजरियों(यूथेश्वरियों) के मध्य श्रीसीताजी के सहित विराजते हैं और वे कहते हैं कि मैं(श्रीस्वामी नाभादास) रस-मंजरी(नाभादास जी का रास-सम्बन्धी नाम) उन्ही अष्ट मंजरियों की दासी(चेरी) हूँ।

इससे स्पष्ट हुआ कि श्रीस्वामी नाभादास जी महाराज रसिकोपासना के महान साधक थे और उन्हें श्री राम जी का यह स्वरूप ही इष्ट है। अब हम आपसे ये पूछते हैं भागवतानन्द जी कि जब रामानुज सम्प्रदाय में "श्री सीताराम जी की वह रसिकोपासना जिसमें उन्हें चन्द्रकला चारुशीला प्रभृति अष्ट सखियों के सहित ध्यान किया जाता है" यह है ही नही तब श्री रामानन्द सम्प्रदाय श्री रामानुज सम्प्रदाय का अंग कैसे हो सकता है ? अस्तु परिशेष न्याय से श्री रामानन्द सम्प्रदाय पूर्ण रूप से स्वतन्त्र वैदिक अनादि परम्परा सिद्ध होती है।

यद्यपि सम्प्रदाय का पूर्ण ज्ञान गुरुपरम्पराप्राप्त आचार्यो से ही करना चाहिए किन्तु कोई यदि कुतर्क करे कि सबलोग अपने अपने सम्प्रदाय की बड़ाई ही किया करते हैं इसलिए कोई निष्पक्ष प्रमाण लेकर आओ इसलिए हम एक निष्पक्ष प्रमाण भी प्रस्तुत करते हैं -

श्री स्वामी रामानन्दाचार्य के समकालीन एक मौलाना 'रसदुद्दीन' ने मुस्लिम फकीरों की जीवनी लिखी है उसमें अन्य किसी भी हिन्दू साधू की जीवनी न लिखकर उस पुस्तक "तजकीर-तुल-फुकरा" में केवल श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज का स्मरण किया है जिसे स्वयं गीताप्रेस ने सन्त अंक में श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी के अलोक में छापा है और डॉ. बलदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक "संस्कृत वांग्मय का बृहद इतिहास" में भी छापा है यथा प्रमाण -

---

काशी में पञ्चगङ्गाघाट पर एक प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं। तेजपुञ्ज और योगेश्वर हैं। वैष्णवों के सर्वमान्य आचार्य हैं। सदाचार और ब्रह्मनिष्ठत्व के स्वरूप ही हैं। परमात्मतत्त्व रहस्य के पूर्णज्ञाता हैं। सच्चे भगवत् प्रेमियों एवं ब्रह्मविदों के समाज में उत्कृष्ट प्रभाव रखते हैं। धर्माधिकार में वे हिन्दुओं के धर्मकर्म के सम्राट् हैं। केवल ब्रह्मवेला में अपनी पुनीत गुफा से गङ्गास्नान के लिए बाहर निकलते हैं।

उन पवित्र आत्मा को रामानन्द कहते हैं। उनके शिष्यों की संख्या पाँच सौ से अधिक है। उस शिष्यसमूह में द्वादश शिष्य गुरु के विशेष कृपापात्र हैं कबीर, पीपा, रैदास आदि । भागवतों के समुदाय का नाम विरागी है। जो लोक-परलोक की इच्छाओं का त्याग करता है, उसे ब्राह्मणों की भाषा में विरागी कहते हैं। कहते हैं कि इस सम्प्रदाय की प्रवर्तिका (ऋषि) जगज्जननी (श्री) सीता जी हैं। उन्होंने प्रथमतः अपने सविशेष सेवक पार्षदरूप (श्री) हनुमान् जी को उपदेश किया और उन ऋषि (आचार्य) के द्वारा संसार में इस रहस्य (मन्त्र) का प्रकाश हुआ। इस कारण इस सम्प्रदाय का नाम 'श्रीसम्प्रदाय' है और उनके मुख्य मन्त्र को रामतारक कहते हैं। उस पवित्रमंत्र को गुरु शिष्य के कान में दीक्षा देते हैं और ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक लाम व मीम के आकार का ललाट तथा अन्य ग्यारह स्थानों पर लगाते हैं। तुलसी का हीरा जनेऊ में गूंथ कर शिष्य के गले में पहनाते हैं। उनकी जिह्वा जप में और मन सच्चे प्रियतम के दर्शनानुसन्धान में रहा करता है। पूर्णतया भगवान् में ही इस सम्प्रदाय की रति है। अधिकांश संत आत्मारागी अथवा परमहंसी जीवन निर्वाह करते हैं।

इसका हिन्दी रूपान्तर कल्याण पत्रिका, गीताप्रेस, गोरखपुर के संत अंक में निम्न प्रकार से प्रकाशित है-

काशी में पञ्चगङ्गाघाट पर एक प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं। तेजपुञ्ज और योगेश्वर हैं। वैष्णवों के सर्वमान्य आचार्य हैं। सदाचार और ब्रह्मनिष्ठत्व के स्वरूप ही हैं। परमात्मतत्त्व रहस्य के पूर्णज्ञाता हैं। सच्चे भगवत् प्रेमियों एवं ब्रह्मविदों के समाज में उत्कृष्ट प्रभाव रखते हैं। धर्माधिकार में वे हिन्दुओं के धर्मकर्म के सम्राट् हैं। केवल ब्रह्मवेला में अपनी पुनीत गुफा से गङ्गास्नान के लिए बाहर निकलते हैं। उन पवित्र आत्मा को रामानन्द कहते हैं। उनके शिष्यों की संख्या पाँच सौ से अधिक है। उस शिष्यसमूह में द्वादश शिष्य गुरु के विशेष कृपापात्र हैं - कबीर, पीपा, रैदास आदि। भागवतों के समुदाय का नाम विरागी है। जो लोक-परलोक की इच्छाओं का त्याग करता है, उसे ब्राह्मणों की भाषा में विरागी कहते हैं। कहते हैं कि इस सम्प्रदाय की प्रवर्तिका (ऋषि) जगज्जननी (श्री)

सीता जी हैं। उन्होंने प्रथमतः अपने सविशेष सेवक पार्षदरूप (श्री) हनुमान् जी को उपदेश किया और उन ऋषि (आचार्य) के द्वारा संसार में इस रहस्य (मन्त्र) का प्रकाश हुआ। इस कारण इस सम्प्रदाय का नाम **'श्रीसम्प्रदाय'** है और उनके मुख्य मन्त्र को रामतारक कहते हैं। उस पवित्रमंत्र को गुरु शिष्य के कान में दीक्षा देते हैं और ऊर्ध्व पुण्ड्र तिलक लाम व मीम के आकार का ललाट तथा अन्य ग्यारह स्थानों पर लगाते हैं। तुलसी का हीरा जनेऊ में गूँथ कर शिष्य के गले में पहनाते हैं। उनकी जिव्हा जप में और मन सच्चे प्रियतम के दर्शनानुसन्धान में रहा करता है। पूर्णतया भगवान् में ही इस सम्प्रदाय की रति है। अधिकांश संत आत्मारागी अथवा परमहंसी जीवन निर्वाह करते हैं।

संस्कृत वांग्मय का बृहत् इतिहास (वेदांत खंड, पृष्ठ २४७-२४८)

...पुरी (काशी) में पञ्चगङ्गाघाटपर एक प्रसिद्ध
...रहते हैं । तेजःपुञ्ज और पूर्ण योगेश्वर हैं ।
...सर्वमान्य आचार्य हैं । सदाचार एवं ब्रह्म-
...स्वरूप ही हैं । परमात्मतत्त्वरहस्यके पूर्ण ज्ञाता हैं ।
...एवं ब्रह्मविदोंके समाजमें उत्कृष्ट प्रभाव
...हैं । अपितु, धर्माधिकारमें वे हिन्दुओंके धर्म-कर्मके
...हैं । केवल ब्रह्मवेलामें अपनी पुनीत गुफासे गङ्गा-
...लिये बाहर निकलते हैं । उन पवित्र आत्माको
...रामानन्द कहते हैं । उनके शिष्योंकी संख्या पाँच
...अधिक है । उस शिष्यसमूहमें द्वादश गुरुके विशेष
...हैं—कबीर, पीपा और रैदास आदि ।

...इस समुदायका नाम 'विरागी' है । जो लोक-
...इच्छाओंका त्याग करता है, उसे ब्राह्मणोंकी
...'विरागी' कहते हैं । कहते हैं कि इस सम्प्रदायकी
...(ऋषि) जगज्जननी (श्री) सीताजी हैं । उन्होंने
...अपने सविशेष सेवक पार्षदरूप (श्री) हनुमान्
(जी) को उपदेश किया और उन ऋषि (आचार्य) के
...संसारमें उस रहस्य (मन्त्र) का प्रकाश हुआ ।
...इस सम्प्रदायका नाम श्रीसम्प्रदाय है । और
...मुख्य मन्त्रको 'रामतारक' कहते हैं । और यह कि
...पवित्र मन्त्रकी गुरु शिष्यके कानमें दीक्षा देते हैं
...तिलक लाल व भीमके आकारका ललाट
...ग्यारह स्थलोंपर लगाते हैं । तुलसीका 'हीरा'
...गूँथकर शिष्यके गलेमें पहनाते हैं । उनकी जिह्वा
...और मन सच्चे प्रियतमके दर्शनानुसन्धानमें रहा
...है । पूर्णतया भजनमें ही रहना इस सम्प्रदायकी
...है । अधिकांश संत आत्मारामी अथवा परमहंसी
...निर्वाह करते हैं ।'

रामानन्दियों के जीवन धन - यतिराजेश्वर जगद्गुरु आनंदभाष्यकार श्री स्वामी रामानन्दाचार्य

(गीताप्रेस द्वारा सन्त अंक में प्रकाशित लेख)

इसके बाद हम आपको एक और अकाट्य प्रमाण देते हैं। श्री नाभादास जी के काका गुरुदेव अर्थात श्री अग्रदेवाचार्य जी महाराज के गुरु भाई और परम पूज्य श्रीकृष्णदासपयोहारीजी महाराज के शिष्य श्री टीला जी(श्री मंगलदेवाचार्य जी महाराज) ने स्वरचित साम्प्रदायिक प्रबन्ध "शिक्षासुधा" में श्री सीताराम जी को प्रणाम करके आनंदभाष्यकार कहकर श्री स्वामी रामानन्दाचार्य भगवान का स्मरण किया है यथा प्रमाण -

❀ श्रीसीतारामाभ्यां नमः ❀

श्री १००८ आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्याय नमः ।

श्री १०८ श्रीटीलाचार्याय नमः । श्री १०८ श्रीगुरुचरणकमलेभ्यो नमः ॥

❀ शिक्षा-सुधा ❀

निरवधि करुणानीरनिधि, रामहिं नमत सप्रेम ।
सन्त-त्राण खलनाशनो, 'टीला' जेहि दृढ़ नेम ॥ १ ॥
विश्व विश्व-जननी तथा, विश्व-भरनि विख्यात ।
राम-महिषि मैथिलि-चरण, 'टीला' नमि हुलसात ॥ २ ॥
प्रस्थानत्रय पर रुचिर भाष्य रच्यो आनन्द ।
श्रीवैष्णवमतजलजरवि, 'टीला' रामानन्द ॥ ३ ॥
वन्दत रामनान्द के 'टीला' पद अभिराम ।
यतिपतितनु धरि अवतरे पूर्ण ब्रह्म श्रीराम ॥ ४ ॥
परमगुरुहिं 'टीला' नमैं, नित्य अनन्तानन्द ।
जिनकी कृपा कटाक्ष ते, मिलै अनन्तानन्द ॥ ५ ॥
कृष्णदास पयहारि गुरु, प्रणमौं बारम्बार ।
रामभक्ति 'टीला' लह्यो, जिनकी कृपा अपार ॥ ६ ॥

और आपकी जानकारी के लिए मैं बतादूँ कि यह ग्रन्थ पूज्य श्री पहाड़ी बाबा (स्वामी देवादास जी महाराज) जी के दादा गुरु श्री प्रथम पहाड़ी बाबा (श्री नरसिंह दास जी महाराज) ने अपने गुरुदेव श्री

सरयूदास जी महाराज (डाकोर-खाकचौक) से अनुनय-विनय करके प्राप्त किया था। वही उन्होंने अपने शिष्य श्री द्वितीय पहाड़ी बाबा (श्री गोपालदास जी) को प्रदान किया और उनसे यह पांडुलिपि श्रीवैष्णवदास जी ने प्राप्त करके ख़ाक चौक वृन्दावन से जन्माष्टमी सन् १९४२ में प्रकाशित कराया। इसमें साम्प्रदायिक रहस्यों का पूर्ण विवेचन है।

अंतिम में हम इस भ्रम का भञ्जन करेंगे जिसमें यह कहा जाता है कि भक्तमाल में तो स्वामीरामानुज के ही क्रम में स्वामी रामानन्दाचार्य जी को लिया जाता है -

---

भक्तमाल छप्पय ३०

बिष्वकसेन मुनिवर्य सुपुनि शठकोप प्रनीता।
बोपदेव भागवत लुप्त उधर्यो नवनीता॥
मंगल मुनि श्रीनाथ पुंडरीकाच्छ परमजस।
राममिश्र रसरासि प्रगट परताप परांकुस॥
यामुन मुनि रामानुज तिमिरहरन उदय भान।
सँप्रदाय सिरोमनि सिंधुजा रच्यो भक्ति बित्तान॥३०॥

यदि इस छप्पय को क्रमबद्ध गुरुपरम्परा मानें तो परम्परा इस प्रकार होगी -

---

१. लक्ष्मी जी　　२. विष्वक्सेन जी
३. शठकोप जी　　४. बोपदेव जी
५. नाथ मुनि　　६. परांकुश मुनि
७. यामुन मुनि　　८. रामानुज स्वामी

पूज्य श्री स्वामी विद्याभास्कर जी द्वारा जो गुरु परम्परा बोली गयी वह इस प्रकार है -

---

१. लक्ष्मी　२. विष्वक्सेन　३. शठकोप　४. नाथमुनि　५. पुण्डरीकाक्ष
६. राममिश्र　७. ईश्वर मुनि　८. यामुन मुनि　९. महापूर्ण स्वामी　१०. रामानुज स्वामी

भक्तमाल की परम्परा विद्याभास्कर जी के कहे परम्परा से मेल नही खाती अतः स्वतः सिद्ध है कि रामानुज सम्प्रदाय अथवा किसी सम्प्रदाय की क्रम बद्ध गुरु परम्परा इस भक्तमाल ग्रन्थ में है ही नही क्योंकि ये भक्तमाल है परम्परा माला नही।

यदि फिर भी कोई आग्रह करे तो उसके लिए उत्तर सुनिए -
भक्तमाल के छप्पय के आधार पर जो क्रम बन रहा है उसमें बोपदेव के बाद नाथ मुनि का नाम है किन्तु यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि बोपदेव जी का प्राकट्य श्री नाथ मुनि के ६६७ वर्ष बाद हुआ है तब गुरु परम्परा में उनका नाम पहले कैसे आ सकता है और अभी तक तो यह भी ज्ञात नहीं है कि बोपदेव जी रामानुज सम्प्रदाय के महात्मा थे अथवा किसी अन्य परम्परा के।

इसलिए जब स्वयं श्री अनन्तानन्दाचार्य जी महाराज ने जो परम्परा हमें बता दी है और अन्य आचार्यो ने भी यही उपदेश किया है अतः "श्रीरामानुज पद्धति प्रताप" इस पाठ को समीचीन कदापि नही माना जा सकता है। इसलिए श्री भक्तमाली जी ने जो सम्प्रदाय की परम्परा को माना है उसे आपने देखे बिना उनकी सम्प्रदाय निष्ठा पर ही आक्षेप करने का क्षुद्र कार्य आपने किया है।

मैं हर बार यही दोहराऊंगा कि हमें आपसे अथवा रामानुज सम्प्रदाय से कोई द्वेष भाव नही है केवल बात इतनी सी है कि जो हम पर आक्षेप करेगा उसका हम उचित उत्तर देंगे और उसके मस्तिष्क के ज्वर को प्रमाणरूपी संजीवनी से शीतल करेंगे ।

निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

श्री सीतानाथ समारम्भां श्रीरामानन्दार्य मध्यमाम् । अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

भागवतानन्द का तृतीय आक्षेप -

हमें सूचना मिली है कि रामानन्द सम्प्रदाय के ही विद्वान सियारामदास नैय्यायिक जी ने एक ग्रन्थ लिखा था "वैष्णव वस्त्र विमर्श" । उस ग्रन्थ में उन्होंने यह लिखा कि श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी कोई त्रिदण्डपरम्परा में नही थे अपितु श्वेतवस्त्रधारी विरक्त महात्मा थे काषाय वस्त्र धारी नहीं थे, यदि ऐसा न हो तो वे इसका खण्डन करें ।

प्रलापोद्धार -

भागवतानन्द जी ! आपकी इच्छानुसार हम इस कुतर्क का खण्डन करने हेतु प्रस्तुत हैं। आज आपके इस भ्रम का भी भञ्जन हम श्री सीताराम जी, श्रीरामानन्दाचार्य भगवान और श्री गुरुदेव के चरणों की कृपा से करने का प्रयास करेंगे -
सियाराम दास नैय्यायिक जी ने वैष्णव वस्त्र विमर्श नाम की पुस्तक लिखी थी जिसमें उन्होंने वशिष्ठ संहिता के श्लोक का उद्धरण दिया था यथा प्रमाण -

श्रीवशिष्ठसंहितास्थं ब्रह्मर्षिश्रीवशिष्ठकृतम् आश्रमधर्मनिरूपणम्
पञ्च केशधराश्चाद्याः शिखिनो वा जटाधराः । हरिन्नीलं विना धौतश्वेतादिवस्त्रधारकाः॥

इसी श्लोक का उद्धरण उन्होंने दिया और यह कहा कि आचार्य चरण त्रिदण्डधारी काषायधारी नही थे परन्तु जब उनका खण्डन पूज्य पण्डित श्री वैदेहीकान्तशरण जी ने "वैष्णववस्त्रविमर्श-समीक्षा" इस पुस्तक में किया तब अन्त में उन्होंने स्वीकार किया कि आचार्य चरण त्रिदण्डधारी और काषायवस्त्रधारी ही थे।

किन्तु क्योंकि आपके हृदय में भी यह शंका बैठी हुई है तो हम इसका समाधान करते हैं -

१. जिस वशिष्ठ संहिता का उद्धरण पूज्य नैय्यायिक गुरु जी ने दिया था उसी प्रकरण में नीचे एक और श्लोक आया है जो इस प्रकार है -

राममन्त्रतपोभ्यां च रामाराधनतत्पराः । सह दण्डत्रयेणान्त्या काषायाम्बरधारकाः ॥
इसमें स्पष्ट रूप से राममंत्र परम्परा में दीक्षित विरक्त वैष्णव को त्रिदण्ड और काषाय धारण करने का निर्देश है।

श्रीसीतारामभक्ताश्च श्रीसीतारामकीर्त्तकाः ।
सीतारामप्रपन्नाश्च श्रीसीतारामचिन्तकाः ॥ ३० ॥
श्रीसीतारामदासाश्च सीतारामपरायणाः ।
सीतारामस्वरूपज्ञाः श्रीसीतारामपूजकाः ॥३१॥
पञ्चकेशधराश्चाद्याः शिखिनो वा जटाधराः ।
हरिन्नीलं विना धौतश्वेतादिवस्त्रधारकाः ॥३२॥
कथाकीर्त्तनस्वाध्यायहोमार्चादिविधायकाः ।
आलस्यरहिता धातुकाष्ठादिपात्रधारकाः ॥३३॥
स्नानसन्ध्यादिकर्त्तारो मन्त्रराजस्य जापकाः ।
केचित्तु भस्मना सार्धमूर्ध्वपुण्ड्रजटाधराः ॥३४॥
राममन्त्रतपोभ्यां च रामाराधनतत्पराः ।
सह दण्डत्रयेणान्त्या काषायाम्बरधारकाः ॥३५॥
सीतारामौ स्मरन्तश्च काष्ठादिपात्रशालिनः ।
भ्रमन्तः पुण्यतीर्थेषु सर्वथा दम्भवर्जिताः ॥३६॥
ईशं धर्मं न निन्दन्ति स्त्रिया सार्धं वसन्ति न ।
न वित्तलोलुपा भूत्वा गच्छन्ति धनिनोऽन्तिकम् ॥३७॥
यतयः सेवनानर्हा गृहस्थवेषधारकाः ।
सेव्या विरक्तिशीलास्ते विरक्तवेषशालिनः ॥३८॥
सन्यासिनो गृहस्थत्वे त्वारूढपतनं भवेत् ।
आरूढपतनस्यात्र प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥३९॥

आज समस्या यह हो गयी है कि तथाकथित विद्वान जन ग्रंथों में से प्रमाण तो उद्धृत करते हैं किन्तु उसके पूर्णांश को स्वीकार करने में संकोच करते हैं इसलिए आज प्रामाणिक तथ्य किसे कहा जाये यह निश्चय करने में व्याघात उत्पन्न हो गया है।

अब हम आपको रामानन्दीय श्रीवैष्णव सम्प्रदाय के ९वें आचार्य अपरबादरायणभगवान्छरीपुरुषोत्तमाचार्यमहर्षिबोधायनवृत्तिकारसम्पादित बोधायनीयगृह्यसूत्र के यतिसंस्कारविधि प्रकरण के आठवें श्लोक में कहा है यथा प्रमाण
त्रिदण्डं दक्षिणे हस्ते वैष्णव्यर्चा निधाय च।
उदरे च तथा पात्रं सावित्र्या निदधाति वै ॥८॥
यति के लिए त्रिदण्ड विधान को स्वयं भगवान बोधायन ने उद्धृत किया है -

अथ श्रीबोधायनीगृह्यशेषसूत्रे
यतिसंस्कारविधिः

त्रिदण्डं दक्षिणे हस्ते वैष्णव्यर्चा निधाय च।
उदरे च तथा पात्रं सावित्र्या निदधाति वै ॥ ८ ॥

इसके अतिरिक्त वाल्मीकि संहिता में भी यति के लिए त्रिदण्ड का विधान किया गया है यथा प्रमाण -
काषाय ब्रह्मसूत्रंच त्रिदण्डं धारयन् यतिः। पुनानः स्वोपदेशेन लोकाँश्च विचरेद्भुवि ॥
(अध्याय ६, श्लोक ३६)

वेदविद्वेदकर्मकृत्। शरीरे निस्स्पृहो योगी प्राणायामे रतः सदा ॥ ३४ ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः परवैराग्यवान् सुधीः। प्रव्रजन्धार्मिकश्रेष्ठ स्तुरीयः कथ्यते बुधैः ॥ ३५ ॥ काषायं ब्रह्मसूत्रंच

वा० सं० ॥२४॥ त्रिदण्डं धारयन् यतिः। पुनानः स्वोपदेशेन लोकाँश्च विचरेद्भुवि ॥ ३६ ॥ ये गृहस्था गृहस्थास्ते वैष्णवा धर्मचारिणः। विरक्तानां च विषये श्रूयतां श्रुतिचोदना ॥ ३७ ॥ विरक्ता रामभक्ता ये ष० अ०

क्योंकि भागवतों की आलोचना करने से आपकी बुद्धि विक्षिप्त हो गयी है तो कदाचित यह हो सकता है कि आप यह आक्षेप करें कि इसका क्या प्रमाण है कि श्रीसम्प्रदायाचार्य आनंदभाष्यकार भगवान श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज यतिधर्म में दीक्षित थे ? तो इसका प्रमाण सुनिए -

वाल्मीकि संहिता में भगवान शिव ने माता पार्वती को श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी की महिमा का उपदेश किया है उसी प्रकरण में उन्होंने श्री आचार्यभगवान को त्रिदण्डधारी कहा है - यथा प्रमाण

गिरिजोवाच—

आचार्य्यः क एवासौ स्तोतव्यो योऽत्र कथ्यते ।

रुद्र उवाच—

श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि तत्त्वमत्र सुखावहम् ॥ २१ ॥ सर्वेषामेव मन्त्राणां राममन्त्रः परः स्मृतः।
तस्यैव चोपदेष्टारः मुख्याचार्य्या वुधैः स्मृताः ॥ २२ ॥ आचार्य्या वहवोऽभूवन् राममन्त्र-
प्रवर्तकाः । किन्तु देवि कलेरादौ पाषण्डप्रचुरे जने । रामानन्देति भविता विष्णुधर्मप्रवर्तकः ॥ २३ ॥
यदा यदा हि धर्मोऽयं विष्णोः साकेतवासिनः । कृशतामेति भो देवि तदा स भगवान् हरिः॥ २४ ॥
रामानन्दयति र्भूत्वा तीर्थराजे च पावने । अवतीर्य जगन्नाथो धर्मं स्थापयते पुनः ॥ २५ ॥
देशकालानवच्छिन्नो विष्णो धर्मः सुखप्रदः । कालानाच्छादितो ह्येवं सततं सम्प्रवर्तते ॥ २६ ॥
सूर्य्यप्रभो महाकायो विशालाक्षो महामतिः । महावीर्यो महासत्त्वो महातेजा जितेन्द्रियः ॥ २७ ॥

ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चस्वी ब्रह्मतत्त्वविशारदः । ब्रह्मवेत्ता तपोराशि र्यतीन्द्रो यतिनां पतिः ॥ ३० ॥
सत्यवक्ता सत्यकर्मा सत्यसन्धो दृढव्रतः । शान्तो दान्तः क्षमायुक्तो विजयी दिक्षु विश्रुतः ॥ ३१ ॥
नाभूदब्राह्मणः कश्चिद्राममन्त्रप्रवर्तकः । तस्मादब्रह्म कुले जन्म गृहीत्वा भगवान् स्वयम् ॥ ३२ ॥
यत्र स्नात्वा महापापी चापि याति परां गतिम् । तस्मिन्नेव महापुण्ये तीर्थराजे च पार्वति ॥ ३३ ॥
सर्वशास्त्रार्थसम्पन्नः ब्रह्मचारी महाव्रती । त्रिदण्डं धारयन्देवः काश्यां वासं करिष्यति ॥ ३४ ॥
तस्य संस्तवनं देवि महापातकनाशनम् ॥ ३५ ॥

वाल्मीकि संहिता अध्याय ५

३६ रामानन्दीय श्री वैष्णव द्वारों में से एक कूबा द्वार के संस्थापक जगद्गुरु द्वाराचार्य श्री केवलरामाचार्य(कूबा) जी महाराज ने स्वरचित साम्प्रदायिक प्रबन्ध "प्रबोधरत्नमाला" में कहा है -

रामानन्दसुमानिते श्रुतिनुते श्रीसम्प्रदाये शुभे
काषायोऽस्ति पटः सितोऽपि विहितोभव्यः शिखासंयुतः ।
श्रीलश्रीतिलकेनभूषिततमो यज्ञोपवीतस्तुतः
संन्यासोऽस्ति वरस्त्रिदण्डसहितोमान्यश्चतुर्थाश्रमः ॥४९॥

अतः स्पष्ट रूप से श्री कूबा जी महाराज ने श्री आचार्य भगवान को काषायवस्त्रधारी तथा त्रिदण्डधारी पंचसंस्कार संपन्न विरक्त वैष्णवाचार्य कहा है।

स्वयं आनन्दभाष्यकार श्रीस्वामीरामानन्दाचार्य जी महाराज ने स्वरचित "श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर" में भी विरक्तों के लिए काषाय वस्त्र का विधान किया है यथा प्रमाण -

चापादिपञ्चायुधचिह्नितांङ्कः समीक्ष्यहृष्टश्चहरिप्रियाणाम् ।
तथा विधानं भक्तिपरः प्रपूजयेत् सुवैष्णवाञ्जन्मफलादि संस्तुवन् ॥४॥
पञ्चायुधाङ्काङ्कितवैष्णवा ये विप्रास्तथा क्षत्रियवैश्यशूद्राः । स्त्रिय-
-स्तथाऽन्येऽपि च विष्णुरूपा जगत्पवित्रप्रपवित्रिणस्ते ॥५॥
ते सर्वतीर्थाश्रयभूतदेहा देशे महाभागवता वसन्ति । यस्मिन्
स तद्दर्शनसंस्थितिभ्यां सूते सुपुण्यं निखिलाघशून्यम् ॥६॥
तदर्चनात्तत्पदनीरपानात्तत्सङ्गतेस्तत्प्रणतेर्विधानात् । नृणां
हि तच्छिष्टसुभोजनाच्च स्यात्कोटिजन्मार्जितपापनाशः ॥७॥
कार्पासिकैः सप्तभिरद्भुतैर्गुणैः सुनिर्मितं तत्कटिसूत्रमुत्तमम् ।
काषायकं वस्त्रयुगं च धारयेत्तथोर्ध्वपुण्ड्रादिकमेव वैष्णवः ॥८॥

(यह पाण्डुलिपि १८वी शताब्दी की है)

इसी पाण्डुलिपि के श्लोक को लालबहादुर संस्कृत विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित श्री वैष्णवमताब्जभास्कर के संस्करण में भी रखा गया है। इस वैष्णव मताब्ज भास्कर पर लालबहादुरसंस्कृतविश्वविद्यालय के व्याकरण विभाग के प्रोफेसर आचार्य जयकांत शर्मा जी की व्याख्या भी है उसी को प्रस्तुत करते हैं -

कार्पासकैः सप्तभिरद्भुतैर्गुणैः सुनिर्मितं तत्कटिसूत्रमुत्तमम्।
काषायकं वस्त्रयुगं च धारयेत्तथोद्ध्र्वपुण्ड्रादिकमेव वैष्णवः॥166॥

पदपरामर्शः

गृहस्थविरक्तसाधारणवैष्णवलक्षणमुक्त्वा सम्प्रत्येकेन विरक्तवैष्णवस्य विशेषमाह- **कार्पासकैरित्यादिना।** वैष्णवः कटिसूत्रं वस्त्रयुगमूर्ध्वपुण्ड्रादिकञ्च धारयेत्। धर्तव्यकटिसूत्रस्य निर्माणविधिमुपादानवस्तुनिर्देशेनाह- उत्तमत्वे हेतुः सुनिर्मितम्, तत्र हेतुः सप्तभिरद्भुतैर्गुणैरिति तत्रापि गुणानवधारयति- **कार्पासकैरिति।** यदर्थं कटिसूत्रं तदवलम्ब्यं कौपीनं तदाच्छादकमुत्तरीयञ्चाह- **वस्त्रयुगमिति।** कषायेण रक्तं काषायं तदेव काषायकम्। कषायरञ्जितं तत्स्यात्। ऊर्ध्वपुण्ड्रादिकमेव धारयेदित्यत्रैवकारेण त्रिपुण्ड्रादिकं लीलयापि न धारयेदिति वचनं परामृश्यते। आदिपदेन विरक्तस्वरूपानुगुणं कमण्डल्वादिकं परिगृहीतं भवतीति सङ्क्षेपः।

(कही कही पर किन्ही पाठों में "कौपीनकं" ऐसा पाठ भी आया है किन्तु वह अधिक समीचीन नही है सांप्रदायिक सिद्धान्तानुसार भी और प्राचीन न होने के अनुसार भी)

इसके अतिरिक्त हम बोधायन सूत्र से भी काषाय वस्त्र के ग्रहण करने के विधान का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं यथा प्रमाण -

काषायवासा यान् कुरुते जपहोमप्रतिग्रहान् ।
न तद् देवगमं भवति हव्यकव्येषु यद् हविः ॥
–इति बौधायनधर्मसूत्रे, द्वितीये प्रश्ने, अष्टमेऽध्याये २४ ।

सभी आर्ष ग्रंथों और साम्प्रदायिक प्रबंधों के प्रमाण उद्धृत करने के पश्चात हम सीधे वैदिक प्रमाण उद्धृत करते हैं।

वेदों का प्रमाण सभी शास्त्रों के सापेक्ष सबसे अधिक ग्रहण किया जाता है - आपस्तम्ब सूत्र के "मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्" वचनानुसार ब्राह्मण भाग को भी वेद ही ग्रहण किया जाता है अस्तु यह जो प्रमाण है वह ब्राह्मणभाग अर्थात उपनिषद् का प्रमाण है -

---

यथा भिक्षुकोपनिषदि -

अथ बहूदका नाम त्रिदण्डकमण्डलुशिखा - यज्ञोपवीतकाषायवस्त्रधारिणो ब्रह्मर्षिगृहे मधुमांसं वर्जयित्वाष्टौ ग्रासान्भैक्षाचरणं कृत्वा योगमार्गे मोक्षमेव प्रार्थयन्ते ।

इसमें संन्यास धर्म का निरूपण किया गया है। उसमें कहा गया कि सन्यासी चार प्रकार के होते है -

१. कुटीचक
२. बहूदक
३. हंस
४. परमहंस

इसके पश्चात बहूदक सन्यासी के लिए त्रिदण्ड और काषाय का विधान किया गया है। अर्थात जो बहूदक सन्यासी होता है वह त्रिदण्ड काषाय धारी होकर केवल अष्टग्रास ग्रहण करके योगमार्ग(अर्थात भक्तियोग और उससे विशिष्ट प्रपत्तियोग के माध्यम से) अर्चिरादि मार्ग से होते हुए मोक्ष अर्थात श्रीभगवान के चरण कमलों की प्राप्ति करते हैं।

अब इसमें जो "प्रपत्तियोगमार्गानुगामी" यह जो लक्षण बताया है यह किस प्रकार यतिचक्रचूड़ामणि हिन्दुधर्मोद्धारक आनंदभाष्यकार जगद्गुरु श्रीस्वामीरामानन्दाचार्य जी महाराज में घटित होता है इसका अनुसन्धान श्री अगस्त्य संहिता के वचनों से उद्धृत होता है जिसमें श्रीरामानन्दाचार्य भगवान के अष्टोत्तरशतनाम स्तोत्र का वर्णन अगस्त्य ऋषि ने किया है यथा प्रमाण -

योगिवर्यो योगगम्यो योजगज्ञो योगसाधनः।
योगिसेव्यो योगनिष्ठो योगात्मा योगरूपधृक्।।5।।

(अगस्त्य संहिता भविष्यखण्ड अध्याय १३५, श्लोक संख्या ५)

(यहाँ योजगज्ञो के स्थान पर योगज्ञो सही पाठ है)

अगस्त्य मुनि कहते हैं - हे श्रीरामानन्द महाप्रभो ! आप योगियों में श्रेष्ठ हैं ! आप योग(प्रपत्तियोग) को जानने वाले हैं! आप सदा योगसाधना करने वाले हैं ! आप सदा योगीजनों द्वारा सेवित हैं ! आप योगनिष्ठ हैं ! आप योगात्मा अर्थात प्रपत्ति योग की आत्मा अर्थात तत्त्व स्वरूप श्रीरामरूप ही हैं। यहाँ एक और रहस्य यह उद्घाटित होता है कि आचार्यचरण श्री भरत जी के भी अवतार हैं जिस प्रकार ग्रंथों में श्री कृष्णचैतन्य महाप्रभु को श्री राधाकृष्ण तनुमिलित अवतार रूप में ग्रहण किया जाता है उसी प्रकार श्रीस्वामीरामानन्दाचार्यभगवान को श्री भरतजी और राम जी का सम्मिलित अवतार ग्रहण किया गया है।

इन वाक्यों से ऊपर प्रस्तुत किये हुए वैदिक प्रमाण के लक्षण पूर्ण रूप से श्रीआचार्यभगवान में घटित होते हैं अस्तु इससे सिद्ध हुआ कि आचार्य चरण त्रिदण्डधारी काषायवस्त्रधारी महात्मा थे।

हमने श्रीसीताराम जी और श्रीआचार्यभगवान की कृपा से यह जो प्रमाण विद्वज्जनों के समक्ष प्रस्तुत किये हैं हमें आशा है कि आप जन इसका अनुसन्धान करेंगे और आप भागवतानन्द जी ! आप एक बात कान खोलकर सुन लीजिये कि रामानन्दीय श्रीवैष्णव अपनी परम्परा और अपने परम आचार्य पर आपके द्वारा प्रसारित किये गए पाखण्ड का दलन करने में पूर्णतया समर्थ हैं। इसलिए आपको फिर से हम यही कहेंगे कि इसके बाद यदि आपने कुछ भी सम्प्रदाय के विरुद्ध प्रतिकूल बात कही तो वैरागियों का कोप आपको झेलना होगा ! अस्तु सावधान हो जाइये अथवा आप स्वयं ज्ञानी हैं ! जय श्री सीताराम !

निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

श्री सीतानाथ समारम्भां श्रीरामानन्दार्य मध्यमाम् । अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

भागवतानन्द का चतुर्थ आक्षेप -

अगस्त्य संहिता में ही श्री स्वामीरामानन्दाचार्य जी के दीक्षा प्रसंग में कहा है -

आचार्यलक्षणैर्युक्तं वेदवेदान्तपरागम्।
श्रीसम्प्रदायश्रेष्ठञ्च जनोद्धारपरं सदा॥16॥
विज्ञाय राघवानन्दं लब्ध्वा तस्मात् षडक्षरम्।
रहस्यत्रयवाक्यार्थं तात्पर्यार्थं च सन्मतम्॥17॥

यहाँ लिखा है कि आचार्यलक्षणों से युक्त, वेद-वेदान्त में पारंगत, श्रीसम्प्रदायश्रेष्ठ और जनों का परम उद्धार करने वाले स्वामी श्रीराघवानन्दाचार्य जी महाराज ने श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज को श्रीरामषडक्षर मन्त्र की दीक्षा प्रदान की। और उन्होंने श्रीराघवानन्दाचार्य जी महाराज से श्रीसम्प्रदाय के अंतर्गत रहस्यत्रय के वाक्यार्थ और तात्पर्यार्थ को ग्रहण किया। अब श्रीसम्प्रदाय में रहस्यत्रय इस प्रकार है (मूल नारायण अष्टाक्षरी मन्त्र, नारायणमन्त्रद्वय, गीताचरमश्लोक) इसी को श्रीस्वामीरामानन्दाचार्यजी महाराज ने अपने गुरुदेव से प्राप्त किया। अब हमको यह दुर्भाग्य देखने को मिल रहा है कि सम्प्रदाय वैशिष्ट्य दिखाने के चक्कर में जो द्वय मंत्र है वो भी बदल दिया लोगों ने, कह दिया कि जो मूल मन्त्र हमारा षडक्षर होगया और द्वयमन्त्र में "श्रीमन्नारायणचरणौ शरणं प्रपद्ये" के स्थान पर "श्रीसीतारामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये" ऐसा बदल दिया यह भी बहुत प्राचीन हमें नहीं प्राप्त हो रहा है कुछ अभिनव वैशिष्ट्य दिखाने के चक्कर में किया है तो वेद मन्त्रों के उपनिषदों के संहिताओं के भाव को केवल वैशिष्ट्य दिखाने के चक्कर में परिणत करते जायेंगे तो यह सही कैसे होगा ?

प्रलापोद्धार -

भागवतानन्द जी ! मैं अभी तक आपको विद्वान समझ कर बहुत सम्मान देता आ रहा था किन्तु आपके इस आक्षेप ने यह सिद्ध किया कि आपको सामान्य संस्कृत श्लोकों का भी अनुवाद पढ़कर समझ नही आता क्योंकि यदि आप अपने ही दोहराये हुए श्लोकों का

अर्थ समझने का प्रयास करते तो आपको यह समझ आ जाता कि यहाँ किस श्री सम्प्रदाय की चर्चा हो रही है ? खैर, आपके आचार्य-निन्दा विषयक वक्तव्यों को सुनकर इसमें कोई आश्चर्य नही है कि आपकी सामान्य बुद्धि भी क्षीण हो गयी है। अब हम आपके वाक्यों से ही प्रथम आपका उत्तर देकर तब अपनी ओर से प्रमाण प्रस्तुत करेंगे -
प्रथम आनन्द भाष्यकार भगवान का स्मरण करते हैं -

रामानन्द उदारकीर्तिरतुलः श्रीयोगिवर्याग्रणीः
पाखण्डाद्रिविभेदनाशनरहो धर्माभिसंवर्धनः ।
श्रीमान् दिव्यगुणालयो निजयशःस्तोमाङ्कितक्ष्मातलः
सिद्धध्येयपदाम्बुजो विजयतेऽज्ञानान्धकारापहः॥

आपने पहला वाक्य कहा कि श्रीसम्प्रदाय के श्रेष्ठआचार्य श्री स्वामी राघवानन्द जी ने श्रीस्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज को षडक्षर राम मन्त्र प्रदान किया।
अब आपके दूसरे वाक्य में अपने कहा कि श्रीस्वामीरामानन्दाचार्य जी ने अपने गुरुदेव से श्रीसम्प्रदाय के रहस्यत्रय को ग्रहण किया।

इन दोनों वाक्यों को समझ कर एक साधारण संस्कृतज्ञ भी यह समझ सकता है कि यहाँ श्रीराममन्त्रराज पुरस्सर रहस्यत्रय की चर्चा है और रही बात श्रीसम्प्रदाय की तो यहाँ श्रीसम्प्रदाय का अर्थ श्रीजानकी जी से जो परम्परा आयी है उस परम्परा की ही चर्चा यहाँ हो रही है जो तभी समझ आएगी जब आप अपने दोनों वाक्य की संगति लगाकर देखें। यदि आपके अनुसार यह माना जाए कि राम मन्त्र तो रामानुज सम्प्रदाय में भी दिया जाता है तो यहाँ पर विशेष रूप में राममन्त्र न होकर गौण रूप में ग्रहण किया है किन्तु मूर्खानन्द जी ! लगता है आपने श्लोक नही पढ़ा इस प्रसङ्ग में अष्टाक्षर नारायण मन्त्र की कोई चर्चा ही नहीं है और विशेष रूप से षडक्षर राम मन्त्र की चर्चा है अस्तु जो रहस्यत्रय का अर्थ है वह श्रीरामचन्द्रभगवान की ही विशेष उपासना का रहस्यत्रय ग्रहण होगा अष्टाक्षर नारायण मन्त्र का नहीं। क्योंकि इस पूरे प्रसङ्ग में नारायण अष्टाक्षर मन्त्र की चर्चा है ही नहीं ! और वहीँ दूसरी ओर पग पग पर आचार्यभगवान को राममन्त्रप्रचारक कहा गया है। जो अपने गुरुदेव से जिस वस्तु को प्राप्त करता है उसे ही अपने शिष्यों और प्रशिष्यों को प्रदान करता है।
अब हम आपसे एक छोटा सा प्रश्न करते हैं -
तो यदि श्रीराघवानन्दाचार्य जी महाराज रामानुज सम्प्रदाय में दीक्षित थे तब उन्होंने अपनी परम्परा के मूल मन्त्र अर्थात नारायण अष्टाक्षर मन्त्र को त्यागकर अपने शिष्यों को राममन्त्रराज किस प्रकार दिया ? ऐसा करके क्या उन्होंने श्रीरामानुजाचार्य के प्रति अपराध किया ? अपने शिष्य को मुख्य रूप में राममन्त्रपुरस्सर रहस्यत्रय प्रदान करके क्या लक्ष्मी जी से चली आ रही नारायण मन्त्र की परम्परा को उन्होंने कलंकित किया ?

हम जानते हैं कि आप इन प्रश्नों का कोई समीचीन उत्तर अनंत जन्मों में भी नही दे सकते ?

हम इस बात को जानते हैं कि आप रामानन्द सम्प्रदाय द्वेषी आचारियों के द्वारा पोषित हैं अस्तु आपके इस कुतर्क का खण्डन हम वस्तुतः उन्ही रामानन्द सम्प्रदाय द्वेषी आचारियों को ही उत्तर देते हैं -

आचारियों का एक लब्ध प्रतिष्ठ ग्रन्थ है जिसका नाम "श्रीवचनभूषणम" है। इसके रचयिता स्वामी पिल्लै लोकाचार्य हैं जो रामानुज सम्प्रदाय की तिंगल शाखा के प्रधान संस्थापक रहे हैं। इतिहासकारों और साहित्यकारों ने इन्हें "प्रबंधग्रंथों" के प्रचारक रूप में मान्यता प्रदान की है। इन्होने संस्कृत वेद की अपेक्षा तमिल में रचित दिव्यप्रबन्धों का प्रबलता से प्रचार-प्रसार किया और उन्हें तमिलवेद के समान स्थापित किया और उसे अधिक वरीयता देकर उन्होंने तमिल भाषा में कतिपय प्रबंधों की रचना की उन्ही रचनाओं में से एक मुख्य साम्प्रदायिक प्रबन्ध "श्रीवचनभूषण" में उन्होंने प्रपत्ति धर्म को सूत्रों के रूप में परिणत किया है ऐसा माना जाता है। किन्तु उस प्रबन्ध में राम मन्त्र और भगवद अवतारों के मन्त्र के सम्बन्ध में क्या लिखा है यह सभी को जानना चाहिए यथा प्रमाण -

१. श्री स्वामी लोकाचार्य सूत्र संख्या ३३६ में कहते हैं -

संसारवर्द्धकानां क्षुद्राणां भगवन्मंत्राणा-
मुपदेष्टॄणामाचार्यत्वपूर्तिर्नास्ति ॥३३६॥

संसार बर्द्धक और क्षुद्र भगवन्मंत्रों के
उपदेष्टाओं को आचार्यत्व पूर्ति नहीं है ॥ ३३६ ॥

अर्थात वो कह रहे हैं कि भगवान के जो ये क्षुद्र मन्त्र हैं इनको उपदेश करने वाले को आचार्य नही कहा जा सकता है।
इस वचन भूषण पर श्रीस्वामी लोकाचार्य की परम्परा में ही दीक्षित श्रीरामानुजाचार्य जी के द्वितीय अवतार कहे जाने वाले श्री वरवरमुनि स्वामी की टीका है हम उसे भी इन सूत्रों के रहस्य को प्रकट करने हेतु प्रस्तुत करते हैं -

श्रीस्वामी वरवर मुनि ने ऊपर दिए हुए सूत्र पर जो भाष्य किया है वह प्रस्तुत करते हैं -

संसारस्य निवर्तकत्वाभावमात्रं विना वर्द्धकानां महत्त्वं विना क्षुद्राणां तदितरभगवन्मन्त्राणामुपदेष्टॄणामाचार्यत्वप्रतीतिमात्रं विना तत्पूर्तिर्नास्तीत्यर्थः ।

संसार निवर्तक न होना मात्र नहीं किन्तु बढ़ानेवाले क्षुद्र अष्टाक्षरी व्यतिरिक्त भगवन्मत्रों के उपदेष्टाओं को आचार्यत्व प्रतीति बिना पूर्ति नहीं है ।

इस सूत्र में प्रथम तो श्रीवरवरमुनि स्वामी जी ने बताया कि नारायणाष्टाक्षर व्यतिरिक्त जो अन्य क्षुद्रभगवनमंत्र हैं वो केवल मोक्ष न प्रदान करने वाले ही नही अपितु संसार के विषयों में भी वृद्धि कराने वाले हैं अस्तु क्षुद्र भगवन्मन्त्र हैं।

आगे जब उन्होंने ही पूर्वपक्ष बनकर शंका उठायी कि -

क्षुद्राः क्षुद्रदेवतामन्त्राः खलु भगवन्मन्त्रा एवं कथमुच्यंत इत्यत आह— भगवन्मन्त्रा इत्यादि ।

क्षुद्रदेवतामंत्रों को ही क्षुद्र कहते हैं भगवन्मंत्रों को क्षुद्र कहते हैं क्या इस शंका में कहते हैं—भगवन्मंत्रों को इत्यादि ।

क्षुद्रभगवनमंत्र क्या क्षुद्रदेवता के प्रतिपादक हैं तो इसपर वो कहते हैं कि स्वामी लोकाचार्य जी का अगला सूत्र देखो यथा प्रमाण -

भगवन्मंत्राः क्षुद्रा इत्युच्यंते फलद्वारा ॥३३७॥

भगवन्मत्रों को क्षुद्र कहते हैं फलद्वारा ॥ ३३७॥

इस पर वरवरमुनि स्वामी जी टीका करते हैं -

परदेवताभूतभगवद्विषयत्वाज्जायमानमहत्त्वविशिष्टा मन्त्राः क्षुद्रा इत्युच्यंते इति— अर्थकामपुत्रविद्यादिक्षुद्रफलप्रदत्वद्वारेत्यर्थः ।

परदेवतारूप भगवान का विषय होने से वैभववाले मंत्रों को क्षुद्र कहते हैं अर्थ काम पुत्र विद्या आदि क्षूद्र फलों को देने से ।

फिर से पूर्वपक्ष बनकर वरवर स्वामी जी कहते हैं -

संसारवर्द्धका इति कथमुच्यंत इत्यत आह—संसारेत्यादि।

संसारबर्द्धक कैसे इस शंका में कहते हैं— संसार इत्यादि ।

इसके उत्तर में कहते हैं कि अगला सूत्र देखो -

संसारवर्द्धका इत्यपि तेन ॥३३८॥

संसारबर्द्धक कहना भी उस से ही ॥ ३३८ ॥

इस पर वरवरमुनि स्वामी जी टीका करते हैं -

तेनेति पूर्वोक्तबन्धकक्षुद्रफलानां प्रदानादित्यर्थः ।

उस से ही-- पूर्वोक्त बंधक क्षुद्रफलों को देने से ही ।

फिर से पूर्वपक्ष बनकर वरवर स्वामी जी कहते हैं -

तर्ह्येतेषामिदं स्वाभाविकं किमित्यत आह—इदं चेत्यादि ।

तथा सति इन मंत्रों का यह स्वभाव है क्या इस शंका में कहते हैं— यह इत्यादि ।

इसके उत्तर में कहते हैं कि अगला सूत्र देखो -

इदं चौपाधिकम् ॥३३९॥

यह औपाधिक है ॥ ३३९ ॥

इस पर वरवरमुनि स्वामी जी टीका करते हैं -

यह— क्षुद्रफलप्रदत्व । औपाधिक— आगंतुक है ।

इदं चेति—क्षुद्रफलप्रदत्वं परामृश्यते । औपाधिकमिति—उपाधिप्रयुक्ततयाऽऽगतमित्यर्थः ।

आगे वरवरमुनि कहते हैं -

तदुपपादयति चेतनानां रुच्येत्यादिना ।

इस को उपपादन करते हैं— चेतनों की इत्यादि ।

इसके बाद लोकाचार्य जी अगले सूत्र में कहते हैं -

चेतनानां रुच्यागतत्वात् ॥३४०॥

चेतनों को रुचिद्वारा आने से ॥ ३४० ॥

इस पर वरवरमुनि स्वामी जी टीका करते हैं -

भगवन्मन्त्रभूतत्वान्मोक्षफलप्रदत्वशक्तौ सत्यामप्येतेषां क्षु-
द्रफलप्रदत्वं प्रकृतिवश्यस्य चेतनस्य क्षुद्रफलरुच्याऽऽगतत्वा-

दित्यर्थः । ऐश्वर्यकामानां गोपालमंत्रादयः पुत्रकामानां राम-
मंत्रादयः, विद्याकामानां हयग्रीवमंत्रादयः, विजयकामानां
सुदर्शननारसिंहमंत्रादयः, एवं नियमेन क्षुद्रफलानि प्रत्येव वर्त-
माना एते चेतनस्य रुच्यनुगुणमेते मंत्रा एतानि फलानि दद्-
त्विति ईश्वरेण नियमेन कल्पितत्वाद्भवंति, तच्च चेतनरुच्यनु-
गुणं कल्पितत्वात्तेषामिदं स्वाभाविकं न भवत्यौपाधिकमि-
त्युच्यते ।

भगवन्मंत्र होने से मोक्षप्रदत्व शक्ति रहनेपर भी इन का क्षुद्रफलप्रदत्व

प्रकृतिवश्यचेतन की क्षुद्रफल रुचिद्वारा होता है । ऐश्वर्यकामों को गोपालमंत्र
आदि, पुत्रकामों को राममंत्र आदि, विद्याकामों को हयग्रीवमंत्र आदि, विजयका
मों को सुदर्शन नरसिंहमंत्र आदि, इस प्रकार नियमेन क्षुद्रफल ही को देने से
चेतनों की रुचिअनुगुण अमुक फल को देगा ऐसा ईश्वर के नियमपूर्वक कल्पित
होने से । यह कल्पना चेतनों की रुचिअनुगुण कल्पित होने से क्षुद्रफलप्रदत्व
स्वाभाविक नहीं किंतु औपाधिक है ऐसा कहे हैं ।

यह टीका १९२६ में राजगोपालमठ के अधिपति गदाधररामानुजस्वामी द्वारा रघुनन्दनमुद्रणालय से प्रकाशित है

श्रीमल्लोकाचार्यैरनुगृहीतं
श्रीवचनभूषणम् ।

श्रीमद् वरवरमुनिप्रणीत
व्याख्यासंवलितम् ।
भाषाटीकोपेतं च ।

इदं
पंडितैः संस्कृत्य संशोध्य
श्री राजगोपालमठाधीश्वरैः
श्रीरङ्ग श्रीगदाधररामानुजस्वामिभिः
श्रीवैष्णवसम्प्रदायनिलये श्रीराजगोपालमठे स्थापिते
स्वीये
श्रीरघुनन्दनमुद्रणालये
श्रीनिवासाचार्यद्वारा
मुद्रयित्वा प्रकाशितम्।
पुरी।
सन् १९२६
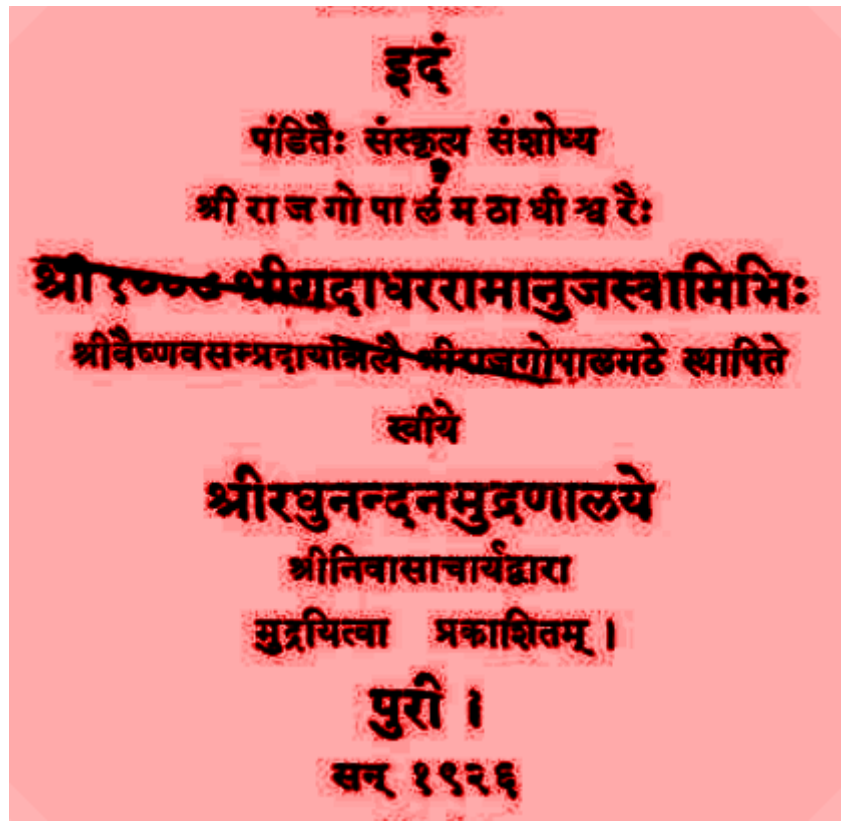
यही श्रीवचनभूषण वरवर मुनि की टीका सहित कोसलेस सदन, अयोध्या के अधिपति पूज्य श्रीविद्याभास्कर जी द्वारा भी प्रकाशित हुआ है उसकी प्रति का चित्र भी हम प्रस्तुत करते हैं -

सूत्रम्– संसरवर्द्धकानां क्षुद्राणां भगवन्मन्त्राणामुपदेष्टृणामाचार्यत्वपूर्तिर्नास्ति।।२३६।।

सूत्रार्थ– संसार को बढ़ाने वाले, भगवान् के जो गौणमन्त्र हैं, उन मन्त्रों का उपदेश करने वाले आचार्यों में आचार्यत्व की पूर्ति नहीं है।

भाष्यम्– संसारस्य निवर्तकत्वाभावमात्रं विना वर्द्धकानां महत्वं विना क्षुद्राणां तदितरभगवन्मन्त्राणामुपदेष्टृणामाचार्यत्वप्रतीतिमात्रं विना तत्पूर्तिर्नास्तीत्यर्थः।

रङ्गनायकी– अष्टाक्षर से भिन्न भगवान् के मन्त्र संसार के निवर्तक न होकर संसार को बढ़ाने वाले हैं। वे महान् नहीं अपितु क्षुद्रमन्त्र हैं। अष्टाक्षरमन्त्र से भिन जो मन्त्र हैं, उन मन्त्रों का उपदेश करने वालों में आचार्यत्व की पूर्ति नहीं है।

भाष्यम्– क्षुद्राः क्षुद्रदेवतामन्त्राः खलु भगवन्मन्त्रा एवं कथमुच्यंत इत्यत आह– भगवन्मन्त्रा इत्यादि।

रङ्गनायकी– यदि कोई कहे कि क्षुद्र कहने का यह अर्थ हुआ कि वे क्षुद्र देवता के मन्त्र हैं किन्तु भगवान् के मन्त्रों को ऐसा कैसे कहा जा सकता है? तो इसके उत्तर में सूत्रकार 'भगवन्मन्त्रा' इत्यादि सूत्र पढ़ते हैं।

सदाचार्यवैभवप्रकरण ४६३

सूत्रम्– चेतनानां रुच्यागतत्वात् ।।३४०।।

सूत्रार्थ– चेतनों की रुचि चूंकि उन क्षुद्र फलों में ही होती है, अतएव उस रुचि के कारण ही इन मन्त्रों में क्षुद्र फलप्रदत्व है।

भाष्यम्– **भगवन्मन्त्रभूतत्वान्मोक्षफलप्रदत्वशक्तौ सत्यामप्येतेषां क्षुद्रफलप्रदत्वं प्रकृतिवश्यस्य चेतनस्य क्षुद्रफलरुच्याऽऽगतत्वादित्यर्थः। ऐश्वर्यकामानां गोपालमंत्रादयः पुत्रकामानां राममंत्रादयः, विद्याकामानां हयग्रीवमंत्रादयः, विजयकामानां सुदर्शननारसिंहमंत्रादयः, एवं नियमेन क्षुद्रफलानि प्रत्येव वर्तमाना एते चेतनस्य रुच्यनुगुणमेते मंत्रा एतानि फलानि ददंत्विति ईश्वरेण नियमेन कल्पितत्वाद्भवंति, तच्च चेतनरुच्यनुगुणं कल्पितत्वात्तेषामिदं स्वाभानिकं न भवत्यौपाधिकमित्युच्यते।**

इति सदाचार्यलक्षणप्रकरणं समाप्तम्।

रङ्गनायकी– ये मन्त्र चूंकि भगवान् के मन्त्र हैं, अतएव इनमें भी मोक्ष प्रदान करने की शक्ति है, फिर भी ये क्षुद्रफल देने वाले इसलिए हैं कि प्रकृतिवश्य (संसारी) जीव की क्षुद्रफलों में ही रुचि होती है, उसी के कारण इन मन्त्रों में क्षुद्रफलप्रदत्व है। ऐश्वर्य चाहने वालें को गोपालमन्त्र आदि, पुत्र चाहने वालों को राममन्त्र आदि, विद्या चाहने वालों को हयग्रीव मन्त्रादि, विजय प्राप्त करना चाहने वालों को सुदर्शन नृसिंहमन्त्र आदि इस तरह से नियमतः क्षुद्र फल प्रदान कने वाले हैं। इन चेतनों की रुचि के अनुसार ही ये मन्त्र इन फलों को प्रदान करें। इस तरह से ईश्वर ही कल्पना करते हैं। चेतनों की रुचि के अनुसार उन मन्त्रों का क्षुद्रफलप्रदत्व परमात्मा के द्वारा कल्पित है। अतएव यह स्वाभाविक न होकर औपाधिक है, ऐसा सूत्रकार ने कहा है।

इस तरह से सदाचार्य लक्षण प्रकरण की रङ्गनायकी व्याख्या सम्पूर्ण हुई।

इन सूत्रों को और उनपर जो वरवरमुनि स्वामी की टीका है उसको पढ़ने के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि रामानुज सम्प्रदाय के सिद्धान्त के अनुसार नारायण अष्टाक्षर व्यतिरिक्त जितने भी संसारवर्धक क्षुद्रभगवन्मन्त्र हैं (श्रीरामकृष्णादि मन्त्र) उनको जो उपदेश करते हैं उनमें आचार्यत्व की पूर्ति नहीं होती है अर्थात वे आचार्यलक्षण से युक्त नहीं हैं।

आगे चलकर इन्हीं सूत्रों की व्याख्या में वरवरमुनि ने स्पष्ट लिखा है कि नारायण अष्टाक्षर से भिन्न ये संसारनिवर्तक न होने से और क्षुद्रफलों का प्रतिपादन करने से क्षुद्रभगवन्मन्त्र कहे जाते हैं। ऐश्वर्य कामना वाले को गोपाल मन्त्र, पुत्रकामना के लिए राममंत्र, विजय कामना के लिए सुदर्शन नरसिंह मन्त्र जपना चाहिए। यद्यपि ये मन्त्र मोक्ष की प्राप्ति कराने में समर्थ हैं फिर भी केवल क्षुद्रफल ही प्रदान करते हैं क्योंकि ऐसा ईश्वर का कल्पित नियम है।

तो प्रिय भागवतानन्द जी ! आपने बिना ये सब पढ़े यह कैसे कहा कि श्रीराघवानन्दाचार्य जी ने रामानुज सम्प्रदाय का रहस्यत्रय श्रीस्वामीरामानन्दाचार्य जी महाराज को प्रदान किया ? क्योंकि ऊपर तो लिखा है कि उन्होंने षडक्षर दिया और वे समस्त आचार्यलक्षणों

से युक्त थे। यदि आपके कथनानुसार श्रीराघवानन्दाचार्य स्वामी रामानुज सम्प्रदाय के होते तो तब तो आचार्यत्व की पूर्ति तो उनमें होती ही नही क्योंकि उन्होंने तो श्रीवचनभूषणानुसार क्षुद्रभगवन्मन्त्र श्रीराममन्त्र को प्रदान किया ? और इस कारण तो आचार्य उन्हें कैसे कहा जाएगा ?

रामममन्त्रराज पुरस्सर श्री सम्प्रदाय के स्वतन्त्र अस्तित्व का वैदिक प्रमाण -

अथ तं प्रत्युवाच स्वयमेव याज्ञवल्क्यः—

श्रीरामस्य मनुं काश्यां जजाप वृषभध्वजः ।
मन्वन्तरसहस्रैस्तु जपहोमार्चनादिभिः ॥
ततः प्रसन्नो भगवान् श्रीरामः प्राह शङ्करम् ।
वृणीष्व यदभीष्टं तद्दास्यामि परमेश्वर ॥

इति । स होवाच—

मणिकर्ण्यां मम क्षेत्रे गङ्गायां वा तटे पुनः ।
म्रियते देहि तज्जन्तोर्मुक्तिं नाऽतो वरान्तरम् ॥

इति । अथ स होवाच श्रीरामः—

क्षेत्रेऽत्र तव देवेश यत्र कुत्रापि वा मृताः ।
कृमिकीटादयोऽप्याशु मुक्ताःसन्तु न चान्यथा ॥

यहाँ पर याज्ञवल्क्य महर्षि उपदेश कर रहे हैं कि वृषभध्वज शिव जी एक बार काशी में जाकर अनेक जप होम अर्चन विधि से मन्त्रों का जाप करने लगे। इससे प्रसन्न होकर भगवान श्री राम शिव जी से बोले - हे परमेश्वर ! आपको जो अभीष्ट हो आप वो वर मांगिये। यह सुनकर सच्चिदानंद परमात्मा श्री राम जी से शिव जी बोले - हे प्रभु ! मेरे इस मणिकर्णिका क्षेत्र में अथवा गंगा जी के तट के इस पार तक जो कोई प्राणी देह त्याग करे वह परम मुक्ति को प्राप्त हो।

यह सुनकर श्री राम जी बोले - हे देवेश ! आपके इस क्षेत्र में कृमि कीटादि जो प्राणी देह त्याग करेगा वह अवश्य ही मुक्ति को प्राप्त होगा इसमें कोई संदेह नहीं है आपके इस क्षेत्र में सभी प्राणी मुक्ति और सिद्धि को प्राप्त होंगे। जन्मान्त में मुक्त होंगे यह मेरा वर है जो असत्य नहीं होगा।

अविमुक्ते तव क्षेत्रे सर्वेषां मुक्तिसिद्धये ।
अहं सन्निहितस्तत्र पाषाणप्रतिमादिषु ॥
क्षेत्रेऽस्मिन्योऽर्चयेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन मां शिव ।
ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥
त्वत्तो वा ब्रह्मणो वापि ये लभन्ते षडक्षरम् ।
जीवन्तो मन्त्रसिद्धाः स्युर्मुक्ता मां प्राप्नुवन्ति ते ॥
मुमूर्षोर्दक्षिणे कर्णे यस्य कस्यापि वा स्वयम् ।
उपदेक्ष्यसि मन्मन्त्रं स मुक्तो भविता शिव ॥
इति श्रीरामचन्द्रेणोक्तं योऽविमुक्तं पश्यति । स जन्मान्तरितान् दोषान् नाशयति ।
इति चतुर्थकण्डिका ।

आगे राम जी ने कहा - इस आपके अविमुक्त क्षेत्र में सभी को मुक्ति प्रदानार्थ पाषाण या अन्य प्रतिमाओं में भी मैं सदा सन्निहित ही रहुँगा॥

हे शिवजी ! जिस महामन्त्र का अनुष्ठान आपने किया है उस मन्त्रराज से कोई भी भक्तिभाव पूर्वक मेरी पूजा करेगा उसे अज्ञानावस्था में हुये ब्रह्महत्यादि पापों से भी मुक्त कर दूंगा इस विषय में आप चिन्ता न करें ॥

सर्वेश्वर श्रीरामजी ने कहा श्रीशंकरजी ! जिस षडक्षर ब्रह्मतारक श्रीराम महामन्त्र का अनुष्ठान आप ने किया है उस महामन्त्रराज को आपसे या ब्रह्माजी अथवा अविच्छिन्न परम्परागत आचार्यजी से विधि पूर्वक ग्रहणकर जो साधकवर्ग साधना करेंगे वे जीवन काल में ही मन्त्र सिद्ध होंगे एवं परिणामतः सायुज्य मुक्ति प्राप्तकर मुझे मेरे दिव्यलोक श्रीसाकेतधाम में प्राप्त करेंगे।

सर्वशरण्य श्रीरामजी के इस वरदान रूप आदेश से श्रीराम महामन्त्र की दो परम्परा चली एक श्रीशंकरजी की जिसमें महर्षि अगस्त्यजी महर्षि सुतीक्ष्णजी प्रभृति आते हैं। दूसरी श्रीब्रह्माजी की जिसमें ब्रह्मर्षि श्रीवशिष्ठजी महर्षि श्रीपराशरजी महर्षि श्रीव्यासजी परमहंस शिरोमणि श्रीराम ब्रह्मतत्त्वोपदेशक श्रीशुकमुनिजी प्रभृति का समावेश है जिनकी विरक्त एवं गृहस्थ शिष्यों की परम्परा आज तक विश्व में सर्वत्र न्यूनाधिक रूप से व्याप्त है । इन्हीं महर्षियों की विरक्त परम्परा में २२वें श्रीसम्प्रदायाचार्य आनन्द भाष्यकारजी हुये।

इस रामतापनीयोपनिषद की ३०० वर्ष प्राचीन टीका जो अद्वैती महात्मा श्री आनन्दवन जी द्वारा की गयी उसमें इन श्लोकों के सन्दर्भ में स्पष्ट रूप से दो स्वतन्त्र राम मन्त्र परम्परा के सम्प्रदायों की चर्चा की गयी है यथा प्रमाण -

त्यादिना—'श्वपचो वा ब्राह्मणो वाऽपि' इत्यनेन शिवा-
दिब्रह्मादिसम्प्रदायद्वयं दर्शितम् । अन्यत् स्पष्टम् । ज्ञानसौ-
लभ्यादविमुक्तसेवकस्य यदवान्तरफलम्, तदाह—श्रीराम-
चन्द्रेणोक्तमिति । 'जन्मान्तरिता'निति(१) प्रारब्धकर्मव्यति-
रेकेण इहजन्मकृतकर्मोपलक्षणार्थम् । शेषं स्पष्टम् । अविमुक्तो-
पासनयाऽनायासतः श्रीरामसाक्षात्कारो यस्मात्, तस्मादवि-
मुक्तत्यागे परमपुरुषार्थहानिः स्यादिति भावः (२) । तथाच

इसका यही अर्थ है कि आज ही नहीं आज से ३०० वर्ष पूर्व भी विद्वत्समाज में यह अतिप्रसिद्ध था कि रामानन्दीय श्रीवैष्णव सम्प्रदाय भूमि पर श्रीजानकी, हनुमान जी, ब्रह्मा जी से होकर के आती हुई श्रीसम्प्रदाय की स्वतन्त्र परम्परा है।

राममन्त्रराज पुरस्सर श्री सम्प्रदाय का कतिपय पञ्चरात्र आगम संहिता ग्रंथों से प्रमाण -

वाल्मीकि संहिता के द्वितीय अध्याय में श्लोक संख्या ३१ से ३५ तक श्रीराममन्त्रराज की परम्परा का वर्णन स्वयं आदिकवि ब्रह्मावतार महर्षि वाल्मीकि ने ऋषियों की राममंत्र परम्परा सम्बन्धी जिज्ञासा के समाधान में किया है यथा प्रमाण -

वाल्मीकि रुवाच—

इदं तु परमं तत्त्वं देवाना मप्यगोचरम्। पृष्टं युष्माभि रनघं कथ्यते श्रृणुतर्षयः ॥ ३१ ॥
भगवान् रामचन्द्रो वै परं ब्रह्म श्रुतिश्रुतः। दयालुः शरणं नित्यं दासानां दीनचेतसाम् ॥ ३२ ॥
इमां सृष्टिं समुत्पाद्य जीवानां हितकाम्यया। आद्यां शक्तिं महादेवीं श्रीसीतां जनकात्मजाम् ॥३३॥
तारकं मन्त्रराजं तु श्रावयामास ईश्वरः। जानकी तु जगन्माता हनूमन्तं गुणाकरम् ॥ ३४ ॥
श्रावयामास नूनं स ब्रह्माणं सुधियां वरम्। तस्माल्लेभे वसिष्ठर्षिः क्रमादस्मादवातरत् ॥
भूमौ हि राममन्त्रोऽयं योगिनां सुखदः शिवः ॥ ३५॥ एवं क्रमं समादाय मन्त्रराजपरम्परा।
भूमौ प्रचलिता नित्या सर्वलोकसुखप्रदा ॥ ३६ ॥

परात्पर परब्रह्म भगवान श्रीरामचन्द्र नित्य रूप से अपने दासों के लिए और दीन हृदयवालों के लिए दयालु और शरणागतवत्सल हैं ऐसा वेदप्रसिद्ध है। उन्हीं परम कारुणिक दयासागर भगवान श्रीरामचन्द्र ने इस सृष्टि की रचना कर लोगों की हितकामना से आदिशक्ति महादेवी भगवती जनकपुत्री श्रीसीता जी को यह षडक्षर तारक मन्त्रराज श्रवण कराया। आगे जगन्माता श्रीजानकी जी ने गुणों के सागर श्रीहनुमान जी को यह मन्त्र सुनाया। श्रीहनुमान जी ने सुधीश्रेष्ठ श्रीब्रह्माजी को सुनाया। श्रीब्रह्माजी से यह मन्त्र महर्षि वशिष्ठ को प्राप्त हुआ। और इस क्रम में यह राम मन्त्र भूमि पर अवतीर्ण हुआ। भूमि पर यह मन्त्र योगियों को परम सुख देने वाला और सबका कल्याण करने वाला है। सभी लोकों को सुखप्रद यह राममन्त्रराज की क्रमयुक्त परम्परा भूमि पर नित्य रूप से प्रचलित है।

आगे वहीँ वाल्मीकि संहिता अध्याय ३ श्लोक संख्या १०७ और १०८ में स्पष्ट रूप से राममन्त्रराज की परम्परा का स्मरण किया गया है यथा प्रमाण -

श्री सीता रामतः प्राप सा ददौ वायुसूनवे। ब्रह्मणे स ददावित्थं मन्त्रराज परम्परा ॥ १०७ ॥
प्रातरुत्थाय ये नित्यं सततं श्रद्धयान्विताः। पठन्तीमां परप्रीत्या मन्त्रराजपरम्पराम् ॥ तेऽपि
ब्रह्मपदं यान्ति मुक्त्वा देहमिमं खलु ॥ १०८ ॥

श्रीरामजी से प्राप्त करके यह मन्त्र श्रीजानकी मैय्या ने श्रीहनुमान जी को दिया और उन्होंने फिर ब्रह्मा जी को दिया यही श्रीराममन्त्रराज की परम्परा का क्रम है और हर श्रीसीतारामोपासक रामानन्दीय श्रीवैष्णव को प्रतिदिन प्रातः काल इसका श्रद्धा और परमप्रीति भाव से इसका अनुसन्धान करना चाहिए। इसलिए हम सभी रामानन्दीय श्रीवैष्णव साधकों को यह सन्देश और आचार्यो संतों और महंतों से आग्रह करना चाहते हैं कि आप सभी जन अपने अपने स्थानों पर अपनी गुरुपरम्परा का अंकन कराएं और

नित्य अपनी गुरुपरम्परा का प्रीतिपूर्वक उच्चारण करें। यही इस दास का परमनिवेदन आप सभी रामानन्दीय श्रीवैष्णवों से है। आचार्यप्रापत्ति ही सबसे बड़ा धर्म है क्योंकि आचार्य ही वो राजमार्ग प्रदर्शक हैं जो सीधे साकेतपुरी की प्राप्ति कराते हैं और उनकी कृपा के प्रसाद से ही एक जीव वास्तविकता में अपने मूलस्वरूप में स्थित होता है।

वशिष्ठ संहिता में भी श्री राममन्त्रराज परम्परा का वर्णन किया गया है यथा प्रमाण -

वशिष्ठं ब्रह्मरामज्ञमुपगम्य पराशरः । प्रणम्य दण्डवत् प्राह दयासिन्धो ! जगद्गुरो !
कृपां कृत्वा यथा देव ! दत्तो मे तारकस्त्वया । तथाऽनुगृह्य मां ब्रूहि मन्त्रराजपरम्पराम् ॥
श्रृणु वदामि ते वत्स ! मन्त्रराजपरम्पराम् । यस्याश्च वन्दनाद् रामश्चात्यन्तं हि प्रसीदति ॥
सृष्ट्यादौ च सिसृक्षुः श्रीरामोविधिंविधाय हि। सृष्टये प्रेषयामास वेदं ज्ञानमहानिधिम् ॥
तथाऽप्यर्थावबोधस्याभावाद् विधिः ससर्ज न । जातायामीशभक्तौ च गुरुभक्तिर्यतो नहि ॥
भक्तिद्वये यतश्चास्ति तत्त्वप्रकाशहेतुना । ततो वेदार्थबोधो न गुरोर्भक्तेरभावतः॥
ततो रामस्य खेदं हि समुद्वीक्ष्य च मैथीली । गृहीत्वा विधिवद् रामान्मन्त्रराजं षडक्षरम् ॥
नित्यमुक्तो हनूमांस्तं ददौ चतुर्मुखाय हि । जगत्कर्त्तुस्ततश्चाहमप्राप्नवंश्च तारकम् ॥
मत्तः शक्तिकुमारस्त्वं विधिना लब्धवाँश्चतम् । प्रोक्ता पराशरैषा ते राममन्त्रपरम्परा ॥

एकबार पराशरमुनि परब्रह्मश्रीराम के यथार्थ स्वरूप के मर्मज्ञ महर्षि वशिष्ठ को दंडवत प्रणाम करके बोले - हे दयासिन्धो ! हे जगद्गुरु ! हे सर्वसमर्थ श्रीगुरुदेव ! जिसप्रकार आपने मुझपर कृपा करके तारक मन्त्रराज षडक्षर का उपदेश किया उसी प्रकार आप अपने इस सेवक पर अनुग्रह करके श्रीराममन्त्रराज की परम्परा का भी उपदेश करें ताकि इसका अनुसन्धान कर मैं श्रेयोभागी बनूँ !

इस प्रार्थना को सुनकर महर्षि वशिष्ठ ने कहा - हे वत्स पराशर ! जो यह दिव्य तारक राममंत्रराज मैंने तुम्हें प्रदान किया है वह कैसे प्रकट हुआ इसकी एक दिव्यरहस्यमयी कथा है उसको हम तुम्हें सुनते हैं इसलिए ध्यानपूर्वक सुनो - "सृष्टि के आदि काल में श्रीरामजी ने सृष्टि करने की इच्छा से "एकोहं बहुस्याम" इस वेद-वचनानुसार अपने सत् संकल्प से विधि अर्थात ब्रह्मा जी कि सृष्टि की तदनन्तर उन्हें वेद का बोध कराया और उसके पश्चात ज्ञाननिधि ब्रह्मा जी को आगे सृष्टि करने की आज्ञा दी। भगवान की आज्ञानुसार उन्होंने सृष्टि करने के लिए बहुत प्रयत्न किया किन्तु वेद के सत्य अर्थो का बोध न होने के कारण ब्रह्माजी सृष्टि न कर सके इसका मुख्य कारण यह था कि उनमें श्री राम जी के प्रति ब्रह्म- विषयक भक्ति उत्पन्न हो जाने पर भी अभी तक श्रीराम में गुरु-विषयक भक्ति उत्पन्न नही हुई।

हे पाराशर ! तत्त्व ज्ञान अर्थात वास्तविक वेद-ज्ञान की प्राप्ति में कारण केवल ईश्वर-ज्ञान नहीं उसमें गुरु-भक्ति तथा ईश्वर-भक्ति दोनों ही कारण हैं इसी वजह से श्रीब्रह्मा में गुरु-भक्ति के ज्ञान का अभाव होने के कारण उन्हें वेदार्थ का वास्तविक बोध नही हुआ। इस तत्त्व ज्ञान के आभाव में सृष्टि न कर सकने के कारण ब्रह्मा जी को बड़ा खेद हुआ।

सृष्टि कार्य में असमर्थ होकर विमोहित ब्रह्माजी को देखकर श्रीरामचन्द्रजी भी दुखी हुए, अपने प्राणेश्वर को दुःखी देखकर और इस समस्या को समझकर भगवतीश्रीसीताजी ने सर्वेश्वर श्रीरामजी से शास्त्रविधि के अनुसार षडक्षर-राम-मन्त्रराज को ग्रहण करके अन्यों को इस मन्त्रराज का उपदेश देने की आज्ञा भी प्राप्त कर ली।

हे पाराशर ! तारकब्रह्म षडक्षर राम मंत्रराज के प्रचार की आज्ञा प्राप्त हो जाने पर श्रीसीताजी ने उस षडक्षर श्रीराम मंत्रराज को शास्त्रीय विधान के अनुसार श्रीहनुमानजी को दे कर श्रीब्रह्माजी को सविधि श्रीराम मंत्रराज का उपदेश देने के लिये श्रीमारुति जी को प्रेरित किया अर्थात् श्रीसीताजी ने श्रीहनुमानजी को आज्ञा दी कि श्रीब्रह्माजी को मन्त्रराज की दीक्षा दे कर गुरु महत्व का भी उपदेश करो जिससे वे श्रीरामजी की आज्ञानुसार सृष्टि कार्य में समर्थ हो सकें।

हे पाराशर ! जिस तारक मन्त्रराज को सविधि श्रीहनुमानजी ने माता श्रीजानकीजी से प्राप्त किया था उसी को नित्यमुक्त श्री हनुमानजी ने चतुर्मुख ब्रह्माजी को सविधि प्रदान किया उन जगत्कर्ता ब्रह्माजी से उसी तारकमन्त्रराज को मैंने शास्त्रविधानानुसार प्राप्त किया है।

जिस श्रीराममन्त्रराज को मैंने श्रीब्रह्माजी से प्राप्त किया उसी को मुझसे शक्ति के पुत्र तुमने शास्त्रीय विधान से प्राप्त किया है । हे पराशर ! जो तुमने श्रीराममन्त्राज परम्परा के विषय में मुझसे पूछा था उस परम्परा को मैंने तुम्हें यथापूर्व बता दिया।

इस प्रकार यह सिद्ध हुआ कि श्रीराममन्त्रराज की यह दिव्य पवित्र परम्परा कितनी रहस्यमयी है और इसके पश्चात भी आपके जैसे घोर तिमिर में घिरे हुए व्यक्तियों को यह परम्परा दिखाई नहीं पड़ती। खैर, आप तो न तो खुद किसी सत्सम्प्रदाय से हैं और न ही विषय के ज्ञाता तो आपसे क्या बात की जाए ?

आश्चर्य तो यह है कि आचारी परम्परा आपका सहयोग किस प्रकार कर रही है ? क्या वे भूल गए कि उनके सिद्धान्त क्या हैं जो अपने को परमैकान्ति वैष्णव बतलाते हैं वे लोग अवैष्णवों को किस प्रकार हमारी परम्परा पर बोलने के लिए उकसा रहे हैं ?

लेकिन आपको इतना ही कहेंगे कि आप किसी के बहकावे में आकर कोई प्रलाप मत करो अथवा जब रामानन्दीय श्रीवैष्णवों का कोप आपको झेलना पड़ेगा तब कोई आपको बचाने नहीं आएगा !

अगस्त्य संहिता के अध्याय ८ श्लोक संख्या १ से ३ तक श्रीराममन्त्रराज परम्परा का वर्णन किया गया है -

ब्रह्माददौ वशिष्ठाय स्वसुताय मनुं ततः ।
वशिष्ठोऽपि स्वपौत्राय दत्तवान् मन्त्रमुत्तमम् ॥
पराशराय रामस्य मन्त्रं मुक्तिप्रदायकम् ।
स वेदव्यासमुनये ददावित्थं गुरुक्रमः ॥
वेदव्यासमुखेनात्र मन्त्रो भूमौ प्रकाशितः ।
वेदव्यासो महातेजः शिष्येभ्यः समुदादिशत् ॥

ब्रह्मा जी ने यह राम मन्त्र अपने पुत्र महर्षि वशिष्ठ को प्रदान किया। वशिष्ठ जी ने इस मुक्तिप्रदायक मन्त्र को स्वपौत्र पाराशर मुनि को प्रदान किया यही मन्त्र उन्होंने गुरुक्रम से श्रीव्यास जी को प्रदान किया। वेदव्यास जी के मुख से ही यह मन्त्र भूमि पर प्रकाशित हुआ और वेदव्यास मुनि ने इस मन्त्र को अपने शिष्यों को प्रदान किया।

इन सभी प्रमाणों के अनन्तर हम स्वयं श्रीरामवल्लभा भगवती श्री जानकी जी के परम्परा विषयक उपदेश का प्रमाण रखते हैं -
वाल्मीकि संहिता के ५वें अध्याय में स्वयं भगवान शिव ने पार्वती जी को वेदविश्रुत श्रीजानकी भगवती मैथिली द्वारा कथित महोपनिषद का व्याख्यान किया है। यदि कोई कहे कि यह श्रुति वेदविश्रुत कैसे है तो इसके लिए प्रमाण रखते हैं -
भगवान श्री राम ने स्वयं रामरहस्योपनिषद में विभीषण जी को उपदेश द्वारा समस्त रामानन्दीय श्रीवैष्णव रामोपासकों को इस महोपनिषद के पाठ करने की आज्ञा की है यथा प्रमाण -
श्रीराम उवाच । अथ पञ्च दण्डकानि पितृघ्नो मातृघ्नो ब्रह्मघ्नो गुरुहननः कोटियतिघ्नोऽनेककृतपापो यो मम षण्णवतिकोटिनामानि जपति स तेभ्यः पापेभ्यः प्रमुच्यते । स्वयमेव सच्चिदानन्दस्वरूपो भवेन्न किम् । पुनरुवाच विभीषणः । तत्राप्य शक्तोऽयं किं करोति । स होवाचेमम् । कैकसेय पुरश्चरणविधावशक्तो यो मम महोपनिषदं मम गीतां मन्नामसहस्रं मद्विश्वरूपं ममाष्टोत्तरशतं रामशताभिधानं नारदोक्तस्तवराजं हनूमत्प्रोक्तं मन्त्रराजात्मकस्तवं सीतास्तवं च रामषडक्षरीत्यादिभिर्मन्त्रैर्यो मां नित्यं स्तौति तत्सदृशो भवेन्न किं भवेन्न किम् ॥
इति रामरहस्योपनिषदि प्रथमोऽध्यायः ॥१॥
अब हम उस पूरे उपनिषद को वाल्मीकि संहिता के ५वें अध्याय में से रखते हैं -

रुद्र उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि नित्यां शुद्धां सनातनीम् । महोपनिषदं वेदविश्रुतां वेदरूपिणीम् ॥ १९ ॥

अथ मैथिलीमहोपनिषत्

नित्यां निरञ्जनां शुद्धां रामाऽभिन्नां महेश्वरीम् । मातरं मैथिलीं वन्दे गुणग्रामां रमारमाम् ॥ १ ॥

ॐ तत्सत् । रामरूपिणे परब्रह्मणे नमः । अथ ह वैकदा रत्नसिंहासने समारूढां भगवतीं मैथिलीं लाट्यायनः कौञ्ञायनः खाडायनो भलन्दनो विल्व ऐलाक्य स्तालुक्ष्य एते सप्त ऋषयः प्रेत्य तामूचुः । भूर्भुवः स्वः । सप्तद्वीपा वसुमती । त्रयो लोकाः । अन्तरिक्षम् । सर्वे त्वयि निवसन्ति । आमोदः प्रमोदः । विमोदः । सम्मोदः । सर्वा स्त्व ँ सन्धत्से । आञ्जनेयाय ब्रह्मविद्याप्रदात्रि धात्रि त्वां ँ सर्वे वयं प्रणमामहे प्रणमामहे ॥

अथ हैनान्मैथिल्युवाच । वत्साः कुशलिनोऽदब्धासोऽ रेपसः किंकामा यूयं प्रत्यपद्यध्वम् ॥

ते होचुर्मात मोक्षकामैः किं जाप्यं किं प्राप्यं किं ध्येयं किं विज्ञेय मित्येतत्सर्वं नो ब्रूहि ॥

एकबार श्री जनकराज किशोरी भगवत जानकी जी रत्नसिंहासन पर आरूढ़ थी उसी समय लाट्यायन प्रभृति सप्तऋषियों ने श्रीकिशोरी जी से मोक्षसंबन्धी जिज्ञासा करके उनसे प्राप्य ज्ञेय ध्येय आदि जानने की जिज्ञासा की तिसके अनन्तर श्री किशोरी जी ने चतुर्थोपनिषत् में श्रीराममन्त्रराज परम्परा का वर्णन किया है यथा प्रमाण -

इममेव मनुं पूर्वं साकेतपति र्मामवोचत् । अहं हनूमते मम प्रियाय प्रियतराय । स वेदवेदिने ब्रह्मणे । स वशिष्ठाय । स पराशराय । स व्यासाय । स शुकाय । इत्येषोपनिषत् । इत्येषा ब्रह्मविद्या ॥

प्रकृत उपनिषद् में लाट्यायन प्रभृति महर्षियों को विशिष्ट तत्त्वोपदेशान्तर श्रीराम महामन्त्रराज की परम्परा के विषय में सर्वेश्वरी श्रीसीताजी कहती हैं - यही षडक्षर श्रीराम महामन्त्र को दिव्यलोक में श्रीसाकेताधिनायक सर्वेश्वर श्रीरामचन्द्रजी ने मुझे कहा अर्थात् सविधि उपदेश दिया । मैने मेरे प्रियातिप्रिय सेवक मरुतनन्दन श्रीहनुमानजी को यथा शास्त्र विधि विधान से उपदेश दिया । श्रीहनुमानजी ने भी शास्त्रीय विधान से वेद के ज्ञाता श्रीब्रह्माजी को उपदेश दिया। श्रीब्रह्माजी ने भी शास्त्र विधान के अनुसार ही स्वमानस पुत्र श्रीवशिष्ठजी को उपदेश दिया। श्रीवशिष्ठजी ने शास्त्रीय विधि से श्रीपराशरजी को उपदेश दिया। श्रीपराशरजी ने शास्त्र विधान के अनुसार श्रीव्यासजी को उपदेश दिया। श्रीव्यासजी ने शास्त्र विधानानुसार श्रीशुकदेवजी को उपदेश दिया। यही उपनिषद् श्रीरामचन्द्रजी के दिव्यधाम श्रीसाकेत में जाने का साधन है अर्थात् शास्त्रीय विधि से श्रीगुरुमुख से प्राप्त तारक श्रीराम महामन्त्र के अनुष्ठान से ही सायुज्य मुक्ति या श्रीराम प्राप्ति की जा सकती है अन्य साधनों से नही । यही ब्रह्मविद्या है - उपरोक्त

क्रम से सत् आचार्य परम्परया प्राप्त श्रीराम मन्त्रराज से या उसके सविधि सदनुष्ठान से जीवों की मुक्ति होती है अतः यह ब्रह्मविद्या इस नाम से संसार में प्रसिद्ध है। इससे यह स्फुटित हुआ कि श्रीसम्प्रदाय की परम्परा निम्न रूप से है- १- सर्वेश्वर श्रीरामजी २-सर्वेश्वरी श्रीसीताजी ३-श्रीहनुमानजी ४-श्रीब्रह्माजी ५-श्रीवशिष्ठजी ६-श्रीपराशरजी ७-श्रीव्यासजी ८- श्रीशुकदेवजी।

यदि किसी को अभी यह शंका हो कि राममन्त्रपरम्परा को कही श्रीसम्प्रदाय कहकर सम्बोधित किया गया है क्या तो इसके लिए प्रमाण देते हैं यथा प्रमाण - (महाशम्भु संहिता - रामानन्दीय श्रीवैष्णव अनन्य रसिक नृपति श्रीकरुणासिंधुजी कृत राम नवरत्न सार संग्रह पृष्ठ संख्या ५८-५९ से उद्धृत)

राज मार्ग मिमं बिद्धि रामोक्तं जानकी कृतम् ।
यद्दते चान्य मार्गास्तु चौराणां बीथिका यथा ॥२४

आद्याचार्य्यं हनुमंतं त्यक्त्वाह्यन्य मुपासते ।
क्लिश्यंति चैवते मुग्धा मूलहा पल्लवाश्रिताः ॥२५

५९

श्रीमैथिल्याश्च मंत्रंहि श्रीगुरुं मारुतं महत् ।
सखी भावं दंपतीष्टं भुक्ति मुक्ति प्रदं सदा ॥२६
श्रीजानकी संप्रदायं राम रास मनन्यताम् ।
ऋते केपि न यास्यंति बांछितं फल मेव च ॥२७
श्रीरामस्यायुधौ तप्तौ जानकी मुद्रिकां बिना ।
पारमेष्ठ्यं न प्राप्नोति ज्ञानादि साधनै रपि ॥२८

हम जानते हैं कि तथाकथित निग्रहाचार्य ! आपको सामान्य संस्कृत तो आती ही है इसलिए पहले हिंदी अनुवाद न बोलने का विचार आया किन्तु जब हम यह देखते हैं कि कई रामोपासक रामानन्दीय श्री वैष्णव संस्कृत नही जानते उनकी सुलभता के लिए हिंदी अनुवाद हमें बोलना ही होगा इसलिए अनुवाद करते हैं -

लक्ष्मण जी श्रुतियों से कहते हैं - यह राजमार्ग (अर्थात श्रीसम्प्रदाय रुपी राजमार्ग) श्रीराम जी के द्वारा कहा हुआ है और श्रीजानकी जी का बनाया हुआ है। इसे छोड़कर अन्यमार्गों को जो ग्रहण करते हैं वो सब चोर जैसे हैं क्योंकि चोर ही राजमार्ग छोड़कर वीथिकाओं में भटका करते हैं। (अर्थात यह जो श्रीसम्प्रदाय है ये श्रीसीतारामप्राप्ति का सबसे सुलभतम मार्ग है इसको छोड़कर अन्य जगह भटकने से दुर्गति ही होती है कल्याण तो केवल इस परम्परा का आश्रय लेने में है क्योंकि श्रीरघुनाथ जी ही सबकी परम गति हैं उनसे परे न तो कोई और तत्त्व है और न ही उनके मन्त्र से बढ़कर कोई अन्य भक्तिसाधन इसलिए इस परम्परा का आश्रय जीव मात्र को लेना चाहिए)।

आगे लक्ष्मण जी कहते हैं - जो कोई जीव श्रीसीताराम प्राप्ति के साधन इस श्रीसम्प्रदाय रुपी राजमार्ग में सखी भाव के प्रथम आचार्य श्रीहनुमान जी को त्यागकर अन्य उपासना करते हैं उनकी दशा ऐसी है जैसे कोई व्यक्ति मूल का उच्छेदन करके पल्लवाश्रित होकर दुर्गति को प्राप्त होता है। (भाव यह है कि इस पवित्र श्रीसम्प्रदाय की परम्परा में दीक्षित होकर भी जो अन्य उपासना करता है वो पारमार्थिक रूप से सुखी नही हो सकता)

श्रीमैथिली जी के सहित श्रीराममन्त्र, श्रीसम्प्रदाय के महान आचार्य श्रीमारुति हनुमान जी महाराज तथा नित्यसिद्ध दिव्यतम दंपत्ति श्रीसीतारामजी को इष्ट मानकर उनकी सखी भाव की उपासना सदा जीवों को भुक्ति और मुक्ति दोनों प्रदान करने वाली है। जानकी नाम से विश्रुत श्री जी के सम्प्रदाय अर्थात श्रीसम्प्रदाय जो श्रीसीताराम जी के दिव्यमहारास से समन्वित है इस परम्परा की अनन्यता को छोड़कर कोई भी जीव अपने वाञ्छित फल को प्राप्त नही कर सकते हैं। श्रीजानकीवल्लभ भगवान श्रीराम जी के तप्त आयुधों की छाप लिए बिना और श्रीजानकी जी की मुद्रिका के छाप विना कोई जीव ज्ञानादि साधनों से भी पारमेष्ठ्य पद अर्थात साकेतपुरी की प्राप्ति नही कर सकते हैं।

फिर से दोहरा रहे हैं यह प्रमाण महाशम्भु संहिता का है

साम्प्रदायिक प्रबंधों से प्रमाण -
१. यतिचक्रचूडामणि श्रीरामावतार अखिलजगदोद्धारक हिन्दूधर्मोद्धारक
यतिराजराजेश्वर जगद्गुरु आनन्दभाष्यकार श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी महाराज द्वारा

विरचित गीता आनन्द भाष्य के मंगलाचरण में उन्होंने स्वयं ही अपनी पवित्र गुरु परम्परा का स्मरण किया है यथा प्रमाण -

॥ आनन्दभाष्यम् ॥

अनवद्यगुणागारं जगद्बीजं जगत्पतिम् । केशेन्द्राद्यमरैर्वन्द्यं श्रियः श्रीपतिमाश्रये ॥१॥

श्रीरामं जनकात्मजामनिलजं वेधोवसिष्ठावृषी
योगीशञ्च पराशरं श्रुतिविदं व्यासं जिताक्षं शुकम् ।
श्रीमन्तं पुरुषोत्तमं गुणनिधिं गंगाधराद्यान्यतीन्-
श्रीमद्राघवदेशिकञ्च वरदं स्वाचार्यवर्यं श्रये ॥२॥

परात्पर श्रीरामात्मक परम तत्व को नमस्कार करने के बाद भाष्यकार गीता सम्प्रदाय प्रवर्तक स्वकीय आचार्य पर्यन्त को नमस्कार करते हैं—"श्रीरामं जनकात्मजामित्यादि द्वितीय श्लोक से अखिल ब्रह्माण्ड नायक साकेताधिपति श्रीरामजी को तथा जनकात्मजा ॥ जनकनन्दिनी मूल प्रकृति श्रीसीताजी को एवं अनिलज वायुनन्दन परमभक्त शिरोमणि श्रीहनुमानजी को एवं ब्रह्माजी तथा श्रीवशिष्ठ ऋषिजी को तथा योगीशिरोमणि श्रीपराशर ऋषिजी को एवं समस्त वेद शास्त्र के ज्ञाता व्यास ऋषिजी को एवं ॥ जितेन्द्रिय श्रीशुकाचार्यजी को, गुणसमुदाय के वरुणालय सदृश श्रीपुरुषोत्तमाचार्यजी बोधायनजी को तथा श्रीगंगाधराचार्य प्रभृति यहां आदि शब्द से श्रीसदानन्दाचार्यजी श्रीरामेश्वरानन्दाचार्यजी श्रीद्वारानन्दाचार्यजी श्रीदेवानन्दाचार्यजी श्रीश्यामानन्दाचार्यजी श्रीचिदानन्दाचार्यजी श्रीपूर्णानन्दाचार्यजी श्रीश्रियानन्दाचार्यजी श्रीहर्यानन्दाचार्यजी का ग्रहण होता है इन समस्त पूर्वाचार्यों के साथ श्रीमान् राघवदेशिक अर्थात् जगद्गुरु श्री राघवानन्दाचार्यजी को जोकि समीहित फल देने वाले हैं उन स्वकीय आचार्यदेवों को अभीप्सित कार्य की सिद्धि के लिये मैं आश्रयण अर्थात् सादर दण्डवत् प्रणाम करता हूं ॥२॥

मलूकपीठ वृन्दावन की पवित्र परम्परा में २५वें आचार्य श्री स्वामी साकेतनिवासाचार्य अर्थात श्रीटीला जी द्वारा विरचित "प्रबोधकलानिधि" में जो मंगलाचरण है उसमें श्री सीताराम जी से आरम्भ होती हुई परम्परा में ही श्रीस्वामी रामानन्दाचार्य जी का नाम लिया गया है यथा प्रमाण -

जानकीनायकारब्धां नत्वाऽऽचार्यपरम्पराम् ।
कुर्वे सिद्धान्तबोधाय सत्प्रबोधकलानिधिम् ॥

रामानन्द सम्प्रदाय की श्रीटीलाद्वारपीठनामक श्रीरामानन्दमहापीठाधिपति' श्री ११०८ जगद्गुरुश्रीमङ्गलाचार्य महामुनीन्द्र जो श्री टीला जी के प्रशिष्य थे उनके द्वारा विरचित

मङ्गलशिक्षाम्बुधि में स्पष्ट रूप से प्रथम श्री राम जी उसके पश्चात् श्री सीताजी उसके पश्चात श्रीहनुमान जी और उसके पश्चात् आचार्यपरम्परा में स्वामी श्रीरामानन्दाचार्य जी का स्मरण किया है यथा प्रमाण -

मूलं स्थावरजङ्गमस्य जगतो जन्मादिसम्पादकः
पूर्णं ब्रह्म गुणाम्बुधिर्भवहरः सर्वावतारी स्वराट् ।
मुक्तामुक्तसुरेश्वरैः श्रुतिगणैर्ब्रह्मर्षिभिः संस्तुतः
श्रीरामः सकलेश्वरः सकलवित् पायादपायात् सदा ॥१॥

या विश्वार्तिहरी च विश्वजननी ब्रह्मादिदेवैः स्तुता
या बिम्बी विभुवैभवा च विभुदा सौन्दर्यवारांनिधिः।
या रामस्य परात्मनो भगवतः प्राणप्रिया मुक्तिदा
सा सीता सकलेश्वरी भगवती पायादपायात् सदा ॥२॥

भक्तिज्ञानबलाम्बुधिः करणजिद् भक्तिप्रदो विघ्नहा
वीराणां सुशिरोमणिः सुरनुतः श्रीराममन्त्रप्रदः ।
वज्राङ्गश्च मनोजवः पवनजः श्रीजानकीशोकहृद्
दासः श्रीरघुनायकस्य हनुमान् पायदपायात् सदा ॥३॥

प्रस्थानत्रयभाष्यकृच्छुभविशिष्टाद्वैतसंरक्षकः
सिद्धप्राज्ञनृपालदेवनिचयैः संसेवितो योगिराट् ।
श्रीमद्वैष्णवधर्मपा गुणनिधिः श्रीरामभक्तिप्रदो
रामानन्दजगद्गुरुर्यतिपतिः पायादपायात् सदा ॥४॥

रामानन्द सम्प्रदाय की खोजी द्वारपीठ के संस्थापक श्री खोजी जी महाराज जो स्वयं श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी की पांचवी पीढ़ी के आचार्य थे उन्होंने स्वरचित प्रबंध "उपदेशवल्लरी" में श्रीसम्प्रदाय का विवरण प्रस्तुत किया है
और श्रीसीताजी को सम्प्रदाय प्रवर्तिका के रूप में स्वीकार किया है और इसके पश्चात गुरुपरम्परा का भी विवरण दिया है यथा प्रमाण -

श्रीसम्प्रदा प्रवर्त्तिका जयतु जानकी देवि।
सुख पावत संसार में, जिनकी पद-रज-सेवि॥
जिनकी पद-रज-सेवि, राम की सदा पियारी।
श्रुति सिद्धान्त निचोरि, विशिष्टाद्वैत प्रचारी॥
अपराधिहुँ पर करि दया, मेटति दारुण आपदा।
'खोजी' व्यापी जगतमें, विशद श्रेष्ठ श्रीसम्प्रदा॥२॥

छप्पय

प्रथम दया करि सोय राम सों बीज बुवायो।
पुनि हनुमन्तहि आपु, मन्त्र उपदेशि दृढ़ायो॥
ब्रह्मा और वशिष्ठ पराशर व्यास शुकादिक।
रामानन्दाचार्य सींचि, विस्तार्यो चहुँ दिक्।
जग-सन्ताप-विनाशिनी, छाया सुख पावैं सबै।
सम्प्रदाय श्री देवद्रुम, फूले-फलै-सुपल्लबै॥३॥

प्रथम प्रवर्त्तित कियो धर्म श्रीवैष्णव जगमें।
व्यास शुकादि प्रबोधि जीव बहु लाये मग में॥
कठिन काल कलि-ग्रसित, निरखि उपजो उर दाया।
धरि यतिवर को भेष, प्रगट भे श्रीरघुराया॥
राममंत्र लै सुजन पथ, चले सच्चिदानन्द के।
चरण-कमल वन्दौं सदा, स्वामी रामानन्द के॥४॥

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के २१वें आचार्य और आनंदभाष्यकार भगवान के गुरु जगद्गुरु श्री स्वामी राघवानन्दाचार्य जी ने महाराज ने स्वरचित प्रबंध "सीतमङ्गलमाला" में श्रीसीता जी को "श्रीसम्प्रदाय प्रवर्त्तिका" कहकर स्मरण किया है यथा प्रमाण -

या श्रियः श्रीस्वरूपा श्रीसम्प्रदायप्रवर्त्तिका ।
गुरुणां गुरवे तस्यै श्रीसीतायै सुमङ्गलम् ॥१०१॥

श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के १३वें आचार्य जगद्गुरु श्रीद्वारानन्दाचार्य जी द्वारा विरचित प्रबन्ध "प्रश्नोत्तरावली" के श्लोक ३९ में उन्होंने "वैदिक सम्प्रदाय कौन है और इसके प्रवर्तक कौन है" इसके उत्तर में "श्रीसम्प्रदाय ही वैदिक सम्प्रदाय है और इसके प्रवर्तक श्री राम और श्री सीता जी हैं" ऐसा कहा है यथा प्रमाण -

वैदिकः सम्प्रदायः कः कश्च तस्य प्रवर्त्तकः ।
श्रौतः श्रीसम्प्रदायः स रामसीता प्रवर्त्तितः ॥३९॥

निग्रहाचार्य ! जितने प्रमाण हमने दिए हैं वह हमारे प्रमाण संग्रह का सहस्त्रांश भी नही है इसलिए हम आपको सीधा चेतावनी देते हैं कि आप श्रीसम्प्रदाय की इस पवित्र परम्परा पर आरोप लगाना बंद कर दो और यदि नही करोगे तो आपकी वो दुर्गति होगी जिससे समस्त जन इसके बाद रामानन्द सम्प्रदाय पर आक्षेप लगाने से पूर्व स्वप्न में भी भयभीत होंगे। जो तथाकथित रूप से आपको भगवती से मंत्र प्राप्त हुआ है उसका जप अनुष्ठान करो और अपने नव-निर्मित निग्रह सम्प्रदाय को वैदिक सम्प्रदाय रूप में स्थापित करो अथवा इस परमार्थ पथ पर कुछ हासिल नही होगा आपको !

अभी तक तो हमने यह सिद्ध किया कि किस प्रकार श्री सम्प्रदाय श्री जानकी जी से प्रवर्तित परम्परा है इसके पश्चात हम आपके दूसरे पक्ष का खण्डन करते हैं। आप रामानुज सम्प्रदाय के रहस्यत्रय को श्रीजानकी जी से प्रवर्तित श्रीसम्प्रदाय के रहस्यत्रय रूप में प्रस्तुत करने का कुत्सित प्रयास जो कर रहे थे उसका उत्तर हम आपको श्रीजानकीप्रवर्तित श्रीसम्प्रदाय के वास्तविक रहस्यत्रय का बोध करके देंगे और उसे

अपने सम्प्रदाय के पूर्वाचार्यों के प्रबंधों से सिद्ध भी करेंगे। सबसे प्रथम रामतारक मंत्रराज का स्मरण करेंगे और उसके बाद आपके अपलाप का खण्डन करेंगे -

वात्सल्यादिगुणैककारणपरं सिद्धैःसदाऽनुष्ठितम् योगीन्द्रैःसनकादिभिश्च सततं मुक्तैर्मुदाचिन्तितम्।
सर्वाघौघनिकृन्तनं श्रुतिशिरो वेद्यं विदां शाश्वतम् वन्दे मंत्रकदम्बकारणतमं श्रीतारकं मुक्तिदम्॥१॥

श्रीसम्प्रदाय जिसकी आदि प्रवर्तिका जगज्जननी श्री विदेहराजकिशोरी जानकी जी हैं उस परम्परा में प्रत्येक शिष्य को दीक्षा संस्कार में आचार्य द्वारा तीन मन्त्र दिए जाते हैं १. मूल मंत्र अर्थात रामतारक षडक्षर राममन्त्रराज २. द्वयमन्त्र अथवा मन्त्ररत्न ३. चरममन्त्र इसके अतिरिक्त एक शरणागति मन्त्र भी दिया जाता है।

अब जो आप कह रहे थे कि वैशिष्ट्य दिखाने के लिए मूल मन्त्र षडक्षर मन्त्र को कह दिया गया लेकिन आपकी मूर्खता पर हमें हंसी नही केवल तरस आ रहा है कि आपने कोई वैष्णव ग्रन्थ ही नही पढ़े क्योंकि यदि पढ़ा होता तो आपका ज्ञात होता कि -

1. बृहद्ब्रह्म संहिता में ही राम मन्त्र को मूल मन्त्र कहा गया है -
"सीतामन्त्रेण कुर्वीत मूल मन्त्र जपं तथा" अर्थात् "श्रीसीतायै नमः' इस श्रीसीता मन्त्र से मूल मन्त्र अर्थात् श्रीराममन्त्र का जप करना चाहिए।
इस प्रकार तारकराममन्त्र को मूल मन्त्र कहा गया है।

2. ऐसा ही पूजा प्रकरण में 'श्रीरामतापनी उपनिषद्" में कहा है -
"ततः पुष्पाञ्जलिमूलमन्त्रेण विधिवच्चरेत्" इत्यादि। इससे मूल मन्त्र, मन्त्र राज, तारकमन्त्र, श्रीराममन्त्र ही को कहते हैं, यह सर्वथा निश्चय है।

इसलिए राम मन्त्र को मूल मन्त्र कहना शास्त्रसिद्ध है इससे आपके इस कुतर्क का उच्चाटन हुआ।

आपने लगता है श्रीराममन्त्र के माहात्म्य के विषय में जाने बिना ही कुछ भी आक्षेप लगा दिया है अब हम आपको तारकराममन्त्र की स्वतन्त्र रूप से उपस्थिति वेदों में, पुराणों में, संहिताओं में दिखाते हैं यथा प्रमाण -

१. रामतापिन्योपनिषत् के परिशिष्ट भाग में राममन्त्रमहात्म्य को सुनिए -

य एवं मन्त्रराजं श्रीरामचन्द्रषडक्षरं नित्यमधीते। सोऽग्निपूतो भवति। स वायुपूतो भवति। स आदित्यपूतो भवति। स सोमपूतो भवति। स ब्रह्मपूतो भवति। स विष्णुपूतो भवति। स

रुद्रपूतो भवति। सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति। सर्वक्रतुभिरिष्टवान्भवति। तेनेतिहासपुराणानां रुद्राणां शतसहस्राणि जप्तानि फलानि भवन्ति। श्रीरामचन्द्रमनुस्मरणेन गायत्र्यः शतसहस्राणि जप्तानि फलानि भवन्ति। प्रणवानामयुतकोटिजपा भवन्ति। दश पूर्वान्दशोत्तरान्पुनाति। स पङ्क्तिपावनो भवति। स महान्भवति। सोऽमृतत्वं च गच्छति॥

अत्रैते श्लोका भवन्ति।

गाणपत्येषु शैवेषु शाक्तसौरेष्वभीष्टदः। वैष्णवेष्वपि सर्वेषु राममन्त्रः फलाधिकः॥
गाणपत्यादि मन्त्रेषु कोटिकोटिगुणाधिकः। मन्त्रस्तेष्वप्यनायासफलदोऽयं षडक्षरः॥
षडक्षरोऽयं मन्त्रः स्यात्सर्वाघौघनिवारणः। मन्त्रराज इति प्रोक्तः सर्वेषामुत्तमोत्तमः॥

२. वेद के संहिता भाग में भी यह मन्त्र सूक्ष्म रूप से वर्णित है यथा प्रमाण -

रहस्यमार्तण्डभाष्यम्

२४२

सचन्त यदुषसः सूर्येण चित्रामस्य केतवो रामविन्दन्।
आयन्नक्षत्रं ददृशे दिवो न पुनर्यतो नकिरद्धा नु वेद ॥१४६॥ ऋ१०।१११।७

अन्वयः—यत् केतवः अस्य राम् चित्राम् अविन्दन्, उषसः सूर्येण सचन्त, दिवः न पुनः ददृशे, आयन्नक्षत्रम्, यतः नकिः अद्धा नु वेद ॥ १४६ ॥
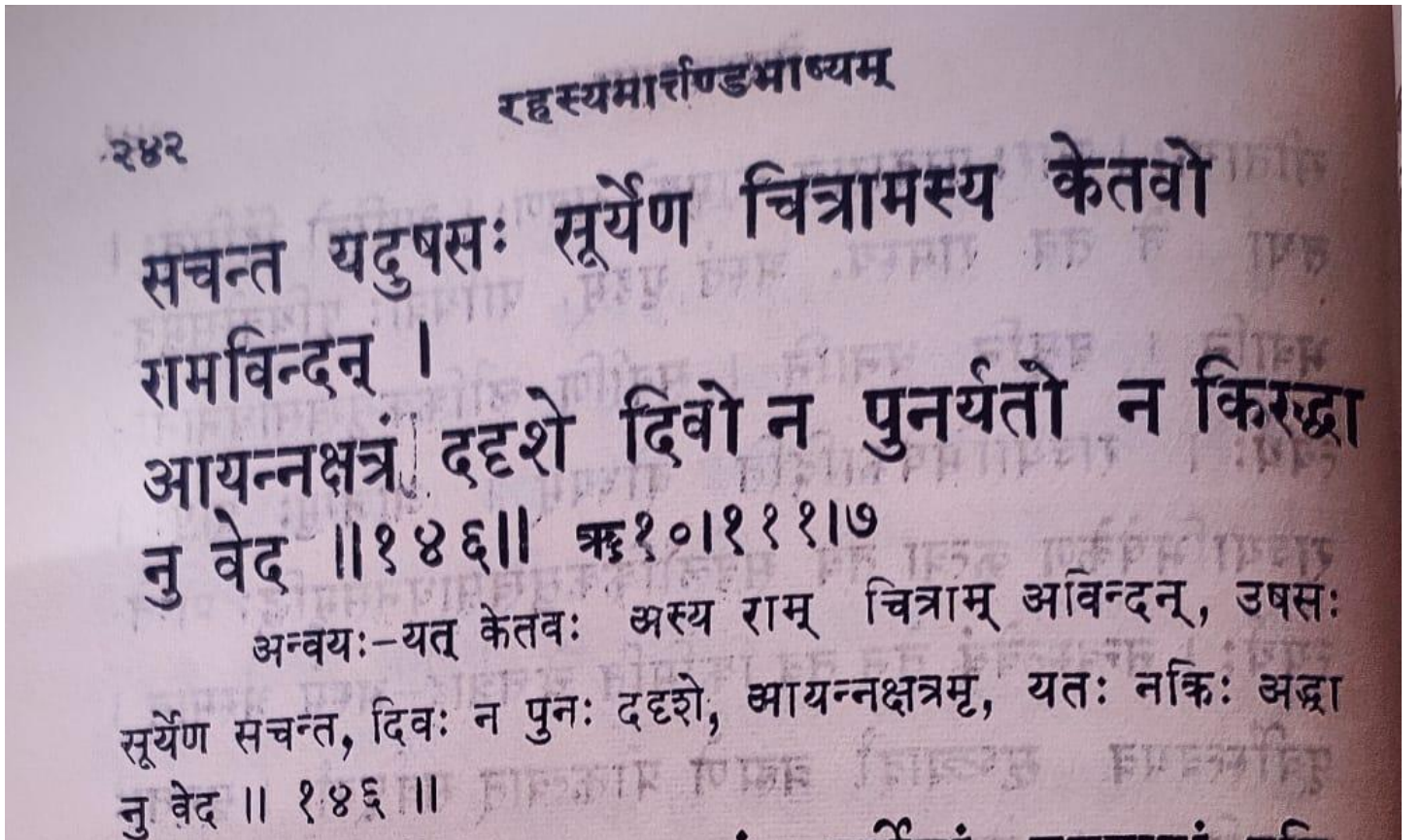
ऋग्वेद के इस मन्त्र में सूक्ष्म रूप से समूल राममन्त्र की व्याख्या की गयी है जिसको स्वयं वृत्तिकार भगवान बोधयानाचार्य श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी द्वारा वेदरहस्यम ग्रन्थ में उद्धृत किया गया है और उस वेदरहस्यम ग्रन्थ पर आनंदभाष्यकार स्वामी जी के गुरुदेव जगद्गुरु श्रीस्वामी राघवानन्दाचार्य जी महाराज ने "रहस्यमार्तण्ड" नमक टीका की है उसी के कुछ अंश को प्रस्तुत करते हैं यथा प्रमाण -

रहस्यमार्त्तण्डभाष्यम्--कथं पूर्वीणां सूनृतानां प्रतिपाद्यो राम इत्यपेक्षायां मन्त्रोद्धारमाह–सचन्तेति । यद् यस्मात् । केतवो ज्ञानिनः । अस्य श्रीरामस्य । चित्रां चित्रश्चित्रवर्णत्वाच्चित्रभानुरग्निः । तत्तत्त्वं रेफः स्वरयुक्तस्तत्सहिताम् । अग्निश्चिदाभासस्तन्मयं कारणं ब्रह्म श्रीराम एवेति ध्येयम् । राम् रामिति श्रुतिमविन्दन् शब्दतोऽर्थतश्च ज्ञातवन्तः । चिदात्मकाऽग्नितत्त्वप्रतिपादकसस्वररेफयुक्तां रामिति श्रुतिं जगृहुरित्यर्थः । ननु कारणब्रह्मप्रतिपादिकोमितिश्रुतिरत्र नास्तीति चेत्तत्राह–उषसः । उषसमुषोवत्सूक्ष्मप्रकाशसमष्टिसूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टकारणब्रह्मप्रतिपादकाकाररूपं वर्णं सूर्येण व्यक्तप्रकाशेन समष्टिस्थूलचिदचित्कारणब्रह्मापादकेनोकाररूपेण वर्णेन । सचन्त गमयामासुः । अकारे उकारमन्तर्भावयामासुरित्यर्थः । "तत्राऽकारे वै सर्वा वागि"तिश्रुतेरिति ध्येयम् । एवं च रश्च अम् चेति रामिति पदं जातम् । अर्धमात्रा तु पारमैश्वर्यशक्त्यात्मिकाऽन्तर्भूता ज्ञेया, शक्तिशक्तिमतोरभेदात् । एवं च रामिति श्रुतिः श्रुतिसारभूतप्रणवरूपेति न वाचो युक्तिमपेक्षत इति बोध्यम् । अथ रामाय नम इत्यंशमुद्धरन्नाह–दिवो न दिवसे दृष्टमिव, जाग्रद्दशायां दृष्टं वस्तुजातं स्वप्नदशायां पुनः सादृश्येन दृश्यते तथेत्यर्थः । पुना रामिति श्रुतेरनन्तरं तत्सदृशं रामिति श्रुतिं व्यष्टि स्थूलसूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टकारण ब्रह्मप्रतिपादिकां रामिति श्रुतिमित्यर्थः । ददृशे ज्ञातवन्तः ।

एतेन समष्टिव्यष्टि स्थूलसूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टकारणब्रह्मैक्यं प्रतिपादितमित्यवगन्तव्यम् । एवं च रामिति पदानन्तरं पठितं रामिति पदं विशिनष्टि—आयन्नक्षत्रमिति । आकारः । य इवाचरतीति यत् , यकारः । नक्षत्रमिति प्रधानत्वाच्चन्द्रमाः, तेन च तत्कारणं हृदयं गृह्यते, "हृदयान्मनो मनसश्चन्द्रमाः ।" इति श्रुतेः । "यथा ता अन्नमसृजन्ते" त्यादावन्नशब्देन पृथिवी गृह्यते तद्वत् । आगमे च हृदयशब्दार्थौ नमः शब्दः प्रसिद्धः । आकारो यकारो नमः शब्दश्च यत्र तादृशं रामितिपदं रामित्यनन्तरं पठेदित्याशयः । एवं रां रामाय नम इति मन्त्र उद्धृतो भवति । तत्र 'आये' तिशब्दयोजनेन रामायेति चतुर्थ्यन्तं पदमुपास्यत्वेन रामस्येप्सिततमत्वं बोधयति । तत्र प्रह्वीभावप्रतिपादकं नमःपदम् । एवं राँ रां च तस्मै रां रामाय नमस्करोमीत्यर्थः पर्यवसन्नो बोध्यः । तत्प्राप्तिफलमाह—यतो यतमानस्योक्तश्रुत्या श्रीराममाराधयतः । नकिः न किरतीतस्ततो विक्षिप्यते । मन इत्यर्थाद् बोध्यम् । तादृशस्य यतमानस्य स्थिरं

मनः । अद्धा साक्षात् नु निश्चयेन, वेद जानाति । उक्तं मन्त्रं जपन् मन्त्रार्थं श्रीरामं मनसा साक्षात्करोति "मनसैवेदमाप्तव्यमि" तिश्रुतेरिति बोध्यम् ॥१४६॥

अब जिससे कि सबको इस क्लिष्ट संस्कृत का अर्थ समझ में आये इसलिए इसका हिंदी अनुवाद भी करते हैं -

दीपिका—"राँ रामाय नमः" इस महामन्त्रका उद्धार करते हुए कहते हैं—ज्ञानियोंने रामशब्दके राम् इस अंश को अग्नि-तत्त्व, स्वरयुक्त रेफपदका प्राप्त किया, क्योंकि उषःकालके समान सूक्ष्मप्रकाश समष्टि सूक्ष्मचिदचिद्विग्रहकारणब्रह्मवाचक अकारको व्यक्तप्रकाश समष्टिस्थूलचिदचिद्विग्रहकार्यब्रह्मप्रतिपादक उकारको "तत्राऽकारे वै सर्वा वाक्" इति श्रुतिके अनुस्वार अभिन्न जाना। अर्थात् रामपदमें रेफ चिन्मयत्व प्रतिपादक विशिष्ट कारण ब्रह्म तथा विशिष्ट कार्यब्रह्म के अभिन्न होने से अकारमें उकारका अभेदेन अन्तर्भाव कर अम्पद सिद्ध होता है। इस प्रकार र+अम्=राम् पद सिद्ध होता है, इसमें पारमैश्वर्यप्रतिपादक अर्द्धमात्रा अन्तर्भूत समझना चाहिये। इस प्रकार राम् तथा प्रणव ओम् पदमें ऐक्य सिद्ध होता है। तथा जैसे दिनमें देखी वस्तु ही के समानरूपसे स्वप्नमें देखते हैं, उसी प्रकार ज्ञानियों ने उक्त राम् पदके आगे समष्टि सूक्ष्मचिदचिद्विग्रह कारणब्रह्मसे अभिन्न व्यष्टि स्थूल चिदचिद्विग्रहविशिष्टकार्यब्रह्मप्रतिपादक राम्-पद पुनः देखा। इस प्रकार राँ राम् पद सिद्ध हुआ, वही मुमुक्षुओं को अभीष्ट है, अतः ईप्सिततमत्व बोधक आ तथा य पद देखा। इस प्रकार रामाय यह चतुर्थ्यन्त पद सिद्ध हुआ, तथा अपनी भक्ति

प्रतिपादित करने के लिए नक्षत्रों में मुख्य चन्द्र के कारण हृदय शब्द से प्रसिद्ध मन्त्र—हृदय नमः शब्द देखा। इस प्रकार रॉं रामाय नमः यह मन्त्र उद्धृत हुआ। इस मन्त्र की उपासना से उपासकों के चित्त की चंचलता दूर होती है। तथा वे निश्चयरूप से उस विशिष्ट ब्रह्म का साक्षात्कार करते हैं। इस प्रकार इस मन्त्र से "रॉं रामाय नमः" इस मन्त्र का उद्धार तथा फल कथन किया गया है॥ १४६॥

अब आपको पुराण से ही राममन्त्र का माहात्म्य बतलाते हैं यथा प्रमाण -

(श्री नारदीय पुराणे, अध्याय ७३, श्लोक संख्या २-४)
सनत्कुमार उवाच:~
वैष्णवेष्वपि मन्त्रेषु राममन्त्राः फलाधिकाः। गाणपत्यादिमन्त्रेभ्यः कोटिकोटिगुणाधिकाः॥
विष्णुशय्यास्थितो वह्निरिन्दुभूषितमस्तकः। रामाय हृदयान्तोऽय महाघौघविनाशनः ॥
सर्वेषु राममन्त्रेषु ह्यतिश्रेष्ठः षडक्षरः ।

श्री सनत्कुमार जी ने कहा :- सभी वैष्णव मन्त्रों में यह राम मंत्र अधिक फल प्रदान करने वाला है। गणपति आदि के मन्त्रों से कोटि कोटि गुना अधिक फल देने वाला है। जिस प्रकार भगवान विष्णु शय्या पर निवास करते हैं, और अग्नि एवं चंद्र भगवान शिव के मस्तक पर विभूषित होता है उसी प्रकार राम जी का मंत्र हृदय में स्थापित होने पर महापातकों का विनाश करने वाला है। **सभी राममन्त्रों में यह षडक्षर राम मंत्र सर्वश्रेष्ठ है।**

पद्मपुराण उत्तरखण्ड से राममन्त्र का माहात्म्य -

जपन्नेव च तन्मन्त्रं तारकं ब्रह्मवाचकम् ।
सहस्रनामसदृशं विष्णोर्नारायणस्य तु ॥६७॥

षडक्षरं महामन्त्रं रघूणा मीश्वरस्य हि ।
जपन्वै सततं देवि सदानन्दसुधाप्लुतम् ॥

षडक्षरं महामन्त्रं तारकं ब्रह्मसञ्ज्ञितम् ॥
ये जपन्ति हि मां भक्त्या तेषां मुक्तिर्नसंशयः ।
इन्दीवरदलश्यामं पद्मपत्रविलोचनम् ॥
धनुर्बाणधरं ब्रह्म सर्वाभरणभूषितम्।
पीतवस्त्रं द्विबाहुं च जानकीप्रियवल्लभम् ॥४१॥
रां रामाय नम इत्थमुच्चार्य मन्त्रमुत्तमम् ।
सर्वदुःखहरं चैतत्पापिनामपि मुक्तिदम् ॥

यजुर्वेद का एक मन्त्र है -

न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः॥

अर्थात उस परब्रह्म परमात्मा की कोई प्रतिमा अर्थात उसकी कोई उपमा अथवा समानता नहीं है अर्थात वो सर्वोत्कृष्ट है।

इस मन्त्र की ही व्याख्या अर्थात टीका श्रीसम्प्रदाय के आठवें आचार्य वेदव्यास जी महाराज ने पद्मपुराण में की है यथा प्रमाण -

तदेव पद्मपुराणे

रुद्रो दिशति यन्मन्त्रं यस्य नाम महद्यशः ।
तस्य नास्त्युपमा क्वापि तं रामं राघवं भजे ॥

अर्थात स्वयं भगवान शिव जिनके मन्त्र को प्रदान करते हैं और जिनका नाम महायशशाली है उन राघव जी को मैं भजता हूँ जिनकी कोई उपमा अर्थात समानता नहीं है।

अब आपको आगम संहिताओं से राममन्त्र का माहात्म्य दिखाते हैं -

अगस्त्य संहितायाम् अध्याय १६ श्लोक १ से ९ पर्यन्त-
सुतीक्ष्ण मन्त्रवर्येषु श्रेष्ठो वैष्णव उच्यते । गाणपत्येषु शैवेषु शाक्त सौरेष्वभीष्टदः ॥
वैष्णवेष्वपि मन्त्रेषु राममन्त्राः फलाधिकाः । गाणपत्यादि मन्त्रेषु कोटि कोटि गुणाधिकाः ॥
मन्त्रास्तेष्वप्यनायास फलदोऽयं षडक्षरः । षडक्षरोऽयं मन्त्रस्तु सर्वाघौघ निवारणः ॥
मन्त्रराज इति प्रोक्तः सर्वेषामुत्तमोत्तमः । दिनंदिनं च दुरितं पक्षमासर्तुवर्षजम् ॥

वाल्मीकि संहिता अध्याय २ में श्लोक ११ से १९ में महर्षि वाल्मीकि राम मन्त्र का माहात्म्य कहते हैं यथा प्रमाण -

इदानीं कथ्यतेऽस्माभिर्युष्माकं पुरतोऽनघाः । महात्म्यं राममन्त्रस्य श्रूयता मृषयो मुदा ॥ ११ ॥ 'रां रामाय नमः' राममन्त्रं यूय मवेत वै । यस्य श्रवणमात्रेण कोटिजन्मकृतान्यपि ॥ पापानि च विनश्यन्ति क्षणेनैव महर्षयः ॥१२॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चापि गुणान्विताः । श्रद्धया परया युक्तास्ते च तस्याधिकारिणः ॥ १३ ॥ राममन्त्रविहीनानां शुद्धकर्मवतामपि । विफला हि क्रियाः सर्वा इति वेदेषु कथ्यते ॥ १४ ॥ वृथा धर्मो वृथा कर्म वृथा जीवनमस्ति च । राममन्त्रविहीनस्य वेदविद्याविदोऽपि च ॥ १५ ॥ रकारादिमकारान्तं मन्त्रं नित्यं षडक्षरम् ॥ श्रीरामस्य जपन्नित्यं पारं तरति कल्मषात् ॥ १६ ॥ रामतारकमन्त्रोऽयं महापातकनाशनः ॥ १७ ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिशोकमोहादिसश्चयः । नश्यति क्षणमात्रेण श्रद्धया जपतः सकृत् ॥ १८ ॥ राममन्त्रं जपन्नित्यं विधिवत्पापभागपि । भूत्वा निष्कल्मषो याति देहान्ते परमं पदम् ॥ १९ ॥

आचारी वैष्णवों की प्रधान संहिता हारीतस्मृति में भी श्रीराममन्त्र का माहात्म्य मुक्तकण्ठ से वर्णित है यथा प्रमाण -

हारीतस्मृतौ - अध्याय ६ श्लोक २४० मे २४६ तक
षडक्षरं दाशरथेस्तारकं ब्रह्म गद्यते। सर्वैश्वर्यप्रदंनृणां सर्वकाम फलप्रदम्॥
एतदेव परंमन्त्रं ब्रह्मरुद्रादि देवता। ऋषयश्च महात्मानो जप्त्वा मुक्ताभवाम्बुधौ॥
एतन्मन्त्रं अगस्त्यो वै जप्त्वारुद्रत्वमाप्नुयात्। ब्रह्मत्वं काश्यपेयो वै कौशिको ह्यमरेशताम् ॥
इममेव जपन्मन्त्रं रुद्रस्त्रिपुरघातकः। ब्रह्महत्यादिनिर्मुक्तः पूज्यमानोऽभवत् सुरैः॥
कार्तिकेयो मनुश्चैव रुद्राकं भृगु नारदाः । बालखिल्यादि मुनयो देवतात्वं प्रपेदिरे॥
अद्यापिरुद्रः काश्यान्तु सर्वेषांत्यक्त जीविनाम् । दिशत्येतन्महामन्त्र तारकं ब्रह्म नामकम् ॥
तस्य श्रवणमात्रेण सर्व एव दिवङ्गताः ।

श्री दशरथनन्दन परब्रह्म श्रीराम का **"रां रामाय नमः"** यही षडक्षर मन्त्र तारक ब्रह्म कहाता है जो मनुष्यों को सम्पूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करने वाला तथा सभी कामनायें सुफल करने वाला है। इसी परम मन्त्र का जप कर ब्रह्मा रुद्र आदि देवगण ऋषि तथा महात्मा मुक्त होकर भवसागर से तर गये हैं। यही मन्त्र सभी लोकों को परमैश्वर्य प्रदान करने वाला है । इसी मन्त्र के जप के प्रभाव से शंकर जी त्रिपुरासुर को मारने में समर्थ हुए हैं तथा ब्रह्महत्यादिक पापों से विमुक्त होकर देवताओं द्वारा पूजित हुए हैं, इस मन्त्र को जप कर अगस्त्य जी रुद्रत्व को प्राप्त किये हैं, कश्यपनन्दन ब्रह्मा पद प्राप्त किये हैं, कौशिक मुनि देवेन्द्र बने हैं। **कार्तिकेय, मनु, रुद्र-सूर्य-भृगु-नारद-बालखिल्यादि** मुनिजन देवत्व को प्राप्त हुए हैं। आज भी भगवान शंकर काशी में मरने वालों को यही मन्त्र प्रदान कर मोक्षधाम प्रदान करते हैं। उसके श्रवण करने मात्र से ही सभी दिव्य साकेत लोक में गये हैं।

और अब अंत में फिर एक वैदिक प्रमाण देते हैं -
सामवेद में लिखा है कि जिस नाम में एकाक्षर मन्त्र अर्थात प्रणव प्रतिष्ठित है उस नाम की उपासना जीवों को करनी चाहिए।

सामवेदे

ॐ मित्येकाक्षरं यस्मिन् प्रतिष्ठितं तन्नाम ध्येयं संसृतिपारमिच्छोः॥1118॥

"सामवेद में"

"ॐ" यह एकाक्षर मन्त्र जिसमें प्रतिष्ठित है उस श्रीरामनाम का ध्यान भवसागर से पार करने की इच्छा वालों को करना चाहिए।

यदि कहो कि राम मन्त्र में प्रणव कैसे प्रतिष्ठित है तो प्रमाण देते हैं यथा प्रमाण -

श्रीमन् महारामायणे श्रीपार्वतीवाक्यं श्रीशंकरं प्रति
'श्रीमहारामायण में श्रीपार्वतीजी का वाक्य श्रीशंकर जी के प्रति'

रामनाम्नः समुत्पन्नः प्रणवो मोक्षदायकः। रूपं तत्त्वमसेश्चासौ वेदतत्त्वाधिकारिणः॥1034॥

श्रीरामनाम से समुत्पन्न "ओम्" मोक्ष प्रदाता है एवं "तत्त्वमसि" इत्यादि महावाक्य भी श्रीरामनाम से ही उत्पन्न होते हैं। तात्पर्य यह है कि जब सम्पूर्ण वाङ्मय श्रीरामनाम से उत्पन्न हुए हैं तब "ओम्" एवं तत्त्वमसि आदि महावाक्य भी श्रीरामनाम से ही उत्पन्न होना चाहिए अतः श्रीरामनाम से "ओम्' की निष्पत्ति प्रक्रिया दिखाया- र अ अ म् अ' यह वर्ण विच्छेद है इसका विपर्यय- अ अ र् अम् यह वर्ण विपर्यय है। यहाँ "अतोरोरप्लुतादप्लुते" (6.1.113) सूत्र से 'र्' को 'उ' हो गया अ अ उ अम् फिर अ अ में सवर्ण दीर्घ आ उ अ म् हुआ फिर 'आद् गुण' सूत्र गुण हो गया ओ अम् हुआ, फिर 'एङःपदान्तादति' सूत्र से पूर्वरूप हुआ ओम् सिद्ध हो गया।

इसके अतिरिक्त सुश्रुत संहिता में भी यही कहा है यथा प्रमाण -

सुश्रुत संहितायाम्
सुश्रुतसंहिता में

कारणं प्रणवस्यापि रामनाम जगद्गुरुम्। तस्माद्ध्येयं सदा चित्ते यतिभिः शुद्धचेतनैः॥545॥

वेदों के मूल प्रणव (ओम्) का भी परम कारण एवं जगद्गुरु श्रीरामनाम है इसलिए शुद्धचित्त वाले संन्यासियों को सदासर्वदा अपने चित्त में श्रीरामनाम का ध्यान करना चाहिये।

अस्तु यह सिद्ध हुआ कि अनन्त कोटि ब्रह्माण्डों में जितने देवी देवता हैं और उनके जो मन्त्र हैं उन सभी मन्त्रों से अनन्त गुना श्रेष्ठ यह रामतारक षडक्षर मन्त्रराज है क्योंकि सभी वैष्णव मन्त्र अर्थात नारायण अष्टाक्षर, गोपाल अष्टादशाक्षर, वासुदेव आदि मन्त्रों से भी

श्रेष्ठ यह श्रीराममन्त्र राज है यह तथ्य वेद पुराण और संहिता तीनों की एकवाक्यता से सिद्ध है।

तो जब यह श्रीराम मन्त्र सभी वैष्णव मन्त्रों में सर्वश्रेष्ठ मन्त्र है तो क्या अन्य मन्त्र जैसे नारायण अष्टाक्षर मन्त्र की स्वतन्त्र परम्परा है क्या इसकी स्वतन्त्र परम्परा नही होगी ? अवश्य है और वही परम्परा राममन्त्रराज परम्परा, श्रीसम्प्रदाय, श्रीरामानन्दसंप्रदाय आदि नामों से भूमि पर विख्यात है।

आपने कहा था कि रामानन्दीय श्रीवैष्णवों ने रामानुज सम्प्रदाय की नक़ल करके उनके द्वय मन्त्र में नारायण के स्थान पर राम पद को रखकर नया द्वय मन्त्र बना लिया। इसको सुनकर आपके बौद्धिक शून्यता का दिग्दर्शन होता है आशा है हमारे द्वारा उद्धृत प्रमाणों को देखकर भविष्य में ऐसी धृष्टता आप कभी नही करेंगे तो अब सुनिए -

द्वय मन्त्र का शास्त्रों से प्रमाण -

1. वृद्धहारीत स्मृति के तृतीय अध्याय में रामद्वय मन्त्र का प्रमाण -

तृतीयोऽध्यायः

अथ भगवन्मन्त्रविधानवर्णनम्

अद्वितीयं यदा मन्त्रं तारकब्रह्मनामकम्
जपित्वा सिद्धिमाप्नोति अन्यथा नाशमाप्नुयात् २७४
सावित्री मन्त्ररत्नञ्च तथा मन्त्रद्वयं शुभम्
सर्वमन्त्रं जपेत्पूर्वं संसिध्यर्थं जपेत्सदा २७५

अर्थात् अद्वितीय मन्त्र भाव यह कि जिस मन्त्र के समान अनन्त भगवन्मन्त्र नहीं हैं वह तारकब्रह्म नामक मन्त्र एवं सावित्री (श्रीरामगायत्री) तथा मन्त्ररत्न जिसको मन्त्रद्वय भी कहते हैं, ये सब मन्त्र पूर्व में जपे सिद्धि के लिए, तब श्रीराममन्त्र को जपे। सदा अर्थात् सर्वदा जपना चाहिये।

और एक बात बता दूँ जिन लोगों के द्वारा आपको यह भ्रमात्मक ज्ञान हुआ है कि द्वय मन्त्र बदल दिया उन लोगों की ही प्रधान स्मृति में यह प्रमाण है जो ऊपर आपको दिया।

2. अथर्ववेदीय शाखा की विश्वम्भरोपनिषद में कहा है -

यो दाशरथेर्द्वयाख्यं मन्त्राणां प्रवरमन्त्ररत्नमधीते स सर्वान्कामानश्नुतेति।

अर्थात् जो दाशरथी श्रीरामजी के मन्त्रद्वय, सब मन्त्रों में श्रेष्ठ मन्त्ररत्न २५ अक्षरवाला जपता है, वह अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष को प्राप्त करता है।

3. स्कन्द पुराण में भी कहा है -

द्वयाद्वयं रामचन्द्रस्य मन्त्ररत्नमनुत्तमम्। पंचविंशाक्षरं विद्वानूसयाति परमां गतिम्॥

अर्थात् श्रीरामचन्द्रजी का मन्त्रद्वय २५ अक्षरवाला जो विद्वान जपते हैं वे परमपद को जाते हैं इन सब प्रमाणो से मन्त्ररत्न सिद्ध है।

चरममन्त्र का शास्त्र से प्रमाण -

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम।।

(वाल्मीकि रामायण युद्ध काण्ड सर्ग १८ श्लोक ३३)

रहस्यत्रय का साम्प्रदायिक प्रबंधों से उद्धरण -
मूल मन्त्र - रामतारक षडक्षर मन्त्रराज का आनन्द भाष्यकार जगद्गुरु श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी विरचित वैष्णव मताब्ज भास्कर से प्रमाण -

मन्त्राणां व्यापकानां भगवत इह चाव्यापकानान्तु मध्येऽ-
तिश्रेष्ठो व्यापकः स श्रुतिमुनिसुमतः शिष्टमुख्यैर्गृहीतः।
नित्यानामाश्रयोऽयं परित उरुशुभो राममन्त्रः प्रधानः
प्राप्योऽथ प्रापकश्च प्रचुरतरगुणज्ञानशक्त्यादिकानाम् ।।११।।

* संवित्करः *

व्यापक एवं अव्यापक — दोनों प्रकार के भगवन्मन्त्रों में श्रीराममन्त्र ही सर्वश्रेष्ठ है। वेदों एवं मुनियों द्वारा सुसम्मत तथा सदाचारसम्पन्न महापुरुषों द्वारा जिसे धारण किया गया है। जो नित्यमुक्त श्रीआंजनेयादि भगवत्पार्षदों का आश्रय तथा सर्वमंगलप्रदायक मन्त्रों में परम प्रधान है। जो सद्गुरुओं से प्राप्य तथा ज्ञान-भक्ति-शक्ति-आदि भगवद्गुणों के साथ भगवत्स्वरूप को प्राप्त कराने वाला है।

द्वय मन्त्र का आनन्द भाष्यकार जगद्गुरु श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी विरचित वैष्णव मताब्ज भास्कर से प्रमाण -

श्रीरामद्वयमन्त्रमद्भुततमं वाक्यद्वयं षट्पदं
बाणाक्षिप्रमिताक्षरन्तु खलु विद्धि त्वं दशार्थान्वितम् ।
युक्तं तत्त्रिपदैस्तु तत्र सुमते पूर्वं शुभस्यास्पदं
वाक्यं पञ्चदशाक्षरं तदनु दिग्वर्णात्मकं तूत्तरम् ।।३५।।

*** संवित्करः ***

'श्रीमद्रामचन्द्रचरणौ शरणं प्रपद्ये, श्रीमते रामचन्द्राय नमः' — यह श्रीरामजी का परम विलक्षण तथा कल्याणप्रद द्वयमन्त्र है। पूर्व वाक्य में तीन पद तथा पन्द्रह अक्षर हैं तथा उत्तरवाक्य में तीन पद तथा दस अक्षर हैं। इस प्रकार षट्पदात्मक एवं पच्चीस अक्षरों वाला यह मंगलास्पद द्वयमन्त्र दस अभिप्रायों को प्रकाशित करने वाला है।

चरम मन्त्र का आनन्द भाष्यकार जगद्गुरु श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी विरचित वैष्णव मताब्ज भास्कर से प्रमाण -

प्रोक्ता वत्सक! मन्त्ररत्नविवृतिः सन्मानसाभीष्टदं
सद्वेद्यं सकृदित्यवेहि चरमं निर्णीतवाक्यार्थकम् ।
रामीयं हि तदीयमन्त्रनिरतैरुद्बोधनीयं परं
द्वात्रिंशत्प्रमिताक्षरं मनुपदं द्व्यर्द्धं जगद्विश्रुतम् ।।४५।।

*** संवित्करः ***

वत्स! मैंने पूर्वश्लोकों के द्वारा मन्त्ररत्न (द्वयमन्त्र) का विवेचन किया। अब जो सन्तों को अभीष्ट फल देने वाला, सत्पुरुषों के द्वारा जानने योग्य निर्णीत वाक्यार्थ वाला, राममन्त्रपरायण साधकों को अवश्य बताने योग्य, अभयदायी श्रीरामजी का उदारघोषणास्वरूप, बत्तीस अक्षर वाला जगत्प्रसिद्ध चरममन्त्र ***'सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति याचते। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम'*** है। इसमें चौदह पद तथा पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध के रूप में दो विभाग हैं। उसका रहस्यात्मक विवेचन श्रवण करो।

इसके पश्चात हम आपको शरणागति मन्त्र का शास्त्रों से प्रमाण देंगे -

अथर्ववेदीय रामरहस्योपनिषद अध्याय २ मन्त्र संख्या ३८

किं मन्त्रैर्बहुभिर्विनश्वरफलैरायाससाध्यैर्वृता
किंचिल्लोभवितानमात्रविफलैः संसारदुःखावहैः ।
एकः सन्नपि सर्वमन्त्रफलदो लोभादिदोषोज्झितः
श्रीरामः शरणं ममेति सततं मन्त्रोऽयमष्टाक्षरः ॥ ३८॥

अब आपको साक्षात् श्री नारायण भगवान द्वारा श्री राम जी के अष्टाक्षर मन्त्र स्तोत्र का दिग्दर्शन कराते हैं -
यथा प्रमाण बृहद्ब्रह्मसंहिता अध्याय २ पाद ७ श्लोक संख्या ३३
श्रीनारायण उवाच -

सर्वावताररूपाणां दर्शनस्पर्शनादिभिः ।
दीनानुद्धरते योऽसौ श्रीरामः शरणं मम ।।१५।।

अब आपको श्री विदेहराजकिशोरी श्रीजानकी जी के रहस्यत्रय का प्रमाण भी हम शास्त्रों से प्रस्तुत करेंगे ताकि अगली बार से आक्षेप लगाने के पूर्व सौ बार आप सोचें -
श्री सीताषडक्षरमन्त्र का शास्त्र से प्रमाण -

रामरहस्योपनिषद अध्याय २ मन्त्र १४ से १७ तक

श्रियं सीतां चतुर्थ्यन्तां स्वाहान्तोऽयं षडक्षरः ॥ १४॥

जनकोऽस्य ऋषिश्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
सीता भगवती प्रोक्ता श्रीं बीजं नतिशक्तिकम् ॥ १५॥

कीलं सीता चतुर्थ्यन्तमिष्टार्थे विनियोजयेत् ।
दीर्घस्वरयुताद्येन षडङ्गानि प्रकल्पयेत् ॥ १६॥

स्वर्णाभामम्बुजकरां रामालोकनतत्पराम् ।
ध्यायेत्षट्कोणमध्यस्थरामाङ्कोपरि शोभिताम् ॥ १७॥

श्रीसीताद्वयमन्त्र का शास्त्र से प्रमाण -

ॐ श्रीमत्सीतापद्मचरणौ शरण प्रपद्ये । श्रीमत्यै रामप्रियायै नमः ॥

- कौशल स्मृति

श्रीसीता जी का चरम मन्त्र का शास्त्र से प्रमाण -

वाल्मीकि रामायण युद्धकाण्ड

पापानां वा शुभानां वा वधार्हाणां प्लवङ्गम्।
कार्यं करुण्यमार्येण न कश्चिन्नापराध्यति।।[23]

इस प्रकार जो आपने आक्षेप किये थे उन सभी आक्षेपों का सप्रमाण खण्डन हमने अपने श्रीगुरुदेव, आनन्द भाष्यकार भगवान और श्रीसीताराम जी की कृपा से कर दिया है। इतना ध्यान रखिएगा कि ये उस प्रमाण संग्रह रुपी समुद्र की कुछ अमृतसदृशबूंदें हैं जिसकी वर्षा श्री सीताराम जी की कृपा से हम आपके जैसे मानसिक रूप से विक्षिप्त व्यक्तियों को रहस्यबोध रुपी जीवन प्रदान करने के लिए कर रहे हैं और हमारा तात्पर्य केवल भगवान श्रीसीताराम जी और उनके इस निजगृह अर्थात श्रीसम्प्रदाय की परिचर्या में है। आशा है समस्त वैष्णव वृन्द के हृदय में रामानन्द सम्प्रदाय के प्रति जागरूकता बढ़ी होगी और आपकी बुद्धि में सत्य का प्रकाश हुआ होगा !

रामानन्दमहं वन्दे वेदवेदान्तपारगम् ।
राममन्त्रप्रदातारं सर्वलोकोपकारकम् ।।

निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

श्री सीतानाथ समारम्भां श्रीरामानन्दार्य मध्यमाम् । अस्मदाचार्य पर्यन्तां वन्दे गुरु परम्पराम्॥

भागवतानन्द का पंचम आक्षेप -

कुछ लोग कहते हैं कि रामानन्दाचार्यजी ने श्रीरामतत्त्व पर निष्ठा रखी लेकिन रामानुजी महात्मा ऐसा नही रखते हैं, ये कितना बड़ा अपशब्द के समान है, स्वयं को श्रीसम्प्रदाय भी ये लोग बताते हैं और श्री का अर्थ लक्ष्मी भी ये नही मानते हैं, श्रीपति भगवान तो नारायण के लिए आया है, श्रीतत्त्व लक्ष्मी तत्त्व तो सीता जी में भी अभिन्नरूप से सिद्ध है इसलिए उनको श्री कहते हैं, जो राधातत्त्व में निष्ठा रखता है वह भी श्रीतत्त्व से राधा भगवती का आश्रय ग्रहण करता है, श्रीतत्त्व से त्रिपुरसुन्दरी का भी ग्रहण होता है तो श्री तो बहवर्थक है न ! श्री राम और विष्णु में तो सर्वथा अभेद है क्योंकि रामानुज संप्रदाय के कतिपय आचार्यों के प्रबंधों में श्री राम जी की महिमा का अतुलित वर्णन है और भार्गव उप पुराण में भी श्री रामानुज सम्प्रदाय का वर्णन है। वेदव्यास जी तो सर्वत्र भगवान को सभी रूपों में वंदना करते हैं और जहाँ अष्टाक्षर मंत्र प्रधान लक्ष्य है वहां बाकी सब गौण हैं जहाँ द्वादशाक्षर मंत्र मुख्या होगा वहां अन्य इसलिए श्रीरामानन्दाचार्य जी को श्रीरामानुजाचार्य जी से अलग करके देखना तो ऐसा ही है कि किसी को उसके घर से बेघर कर दो ! रामानंदियों ! कितना अपराध कर रहे हो तुम लोग ! एकतरफ तो रामानंदाचार्य जी को राम जी का अवतार कहते हो और दूसरी तरफ उन्हें उनके ही घर उनके ही सम्प्रदाय से अलग करते हो इसे देखकर वे भी व्यथित होते होंगे इसलिए हम रामानंदीय आचार्यों से निवेदन करते हैं कि आप अपनी निजी राजनैतिक कुटिलता के कारण ऐसा कैसे कर सकते हैं ?

प्रलापोद्धार -

हमें लगा था कि निग्रहाचार्य जी विद्वान् हैं अस्तु का कम से कम इतनी स्पष्टता तो उनमें होगी कि वे अपने प्रश्न ठीक प्रकार से रखते ? किन्तु बड़े दुर्भाग्य का विषय है कि वे ऐसा भी नही कर पाए इनके इस वक्तव्य को सुनकर तो हमें पूरा विश्वास हो गया है कि वे इस विषय के सामान्य जानकार भी नही हैं क्योंकि यदि वे होते तो ऐसी निरर्थक बातें ही नही करते ?

निग्रहाचार्य का सांकेतिक रूप से कहना यह है कि रामानंदी लोग ये कहते हैं कि रामानुज सम्प्रदाय राम तत्त्व में निष्ठा नही रखता है ! अभी पूर्व में ही आपने कहा था कि रामानंदी मठों में आज भी आलवन्दार स्तोत्र का पाठ होता है और एक तरफ आप रामानुज का रामानंद सम्प्रदाय से अभेद सिद्ध करते हैं और दूसरी तरफ कहते हैं कि रामानंदी

रामनुजियों को रामनिष्ठ नही मानते ? कैसी मूर्खता का परिचय आप दे रहे हैं ? यह तो हुआ आप ही की बातों में विरोधाभास दिखाकर आपका खण्डन इसलिए ऊपर कही बात को हम नहीं मानते यह हमारा मत नहीं है ये तो हम आपकी ही बात में आपका खण्डन कर रहे थे अब आप हमारा पक्ष सुनो !

रामानन्द सम्प्रदाय ने कभी नही कहा कि रामानुजाचार्य जी की राम तत्त्व में निष्ठा नही थी अथवा आलवारों में राम जी के प्रति भक्ति नही थी क्योंकि रामानुज सम्प्रदाय में जो उनके आराध्य श्री रंगनाथ हैं वो और कोई नही है स्वयं रघुकुल के इष्ट देव हैं जिसे श्री राम जी ने आपने प्रिय भक्त विभीषण जी को दिया था और फिर उसी परंपरा में इस विग्रह की वैखानस आगम के आधार पर सेवा होती रही और फिर जब रामानुज सम्प्रदाय का उदय ८वीं शताब्दी में हुआ तब इस विग्रह की सेवा रामानुज सम्प्रदाय को प्राप्त हुई और आज तक विधिवत हो रही है।
पता नही आपको कहा से यह ब्रह्मबोध हो गया हमें नहीं पता किन्तु जो सत्य हमने आचार्यो से सुना पढ़ा है वही दोहरा रहे हैं कि हमारे सम्प्रदाय में न तो किसी देवता का अपमान है और न ही किसी देवी का ! हम जब किसी देवता को प्रणाम करते हैं तब उन्हें श्री राम के स्वरूप अथवा उनके अनन्य भक्त के रूप में ही करते हैं यथा प्रमाण

"सीयराममय सब जग जानी॥ करहुं प्रणाम जोरि जग पानी"
"मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा॥ राम ते अधिक राम कर दासा"

इन सबसे यह प्रमाणित होता है कि हम श्री राम जी को सर्वव्यापक मानकर उनकी भक्ति करते हैं। इससे आपकी इस भ्रान्ति का भञ्जन हुआ।

अब आप कहे कि हम रामानन्दीय श्री वैष्णव "श्री" को लक्ष्मी रूप में स्वीकार नही करते हैं ! यह आपकी बड़ी भारी भूल है क्योंकि आप केवल तथ्यों को उलझाना चाहते हैं इसी प्रश्न के अंतर्गत ही आपने अपने आक्षेप का उत्तर यह कहकर दे दिया है कि "श्रीतत्त्व लक्ष्मी तत्त्व तो सीता जी में भी अभिन्नरूप से सिद्ध है इसलिए उनको श्री कहते हैं, जो राधातत्त्व में निष्ठा रखता है वह भी श्रीतत्त्व से राधा भगवती का आश्रय ग्रहण करता है, श्रीतत्त्व से त्रिपुरसुन्दरी का भी ग्रहण होता है तो श्री तो बहवर्थक है न !" तो जब अपने ही उत्तर दे दिया तो इसका हम क्या उत्तर देंगे किन्तु फिर भी हम अपना पूरा पक्ष रखेंगे !

एक ओर आप कहते हैं कि श्रीपति का अर्थ केवल नारायण ही होता है ओर वहीँ दूसरी ओर आप कहते हैं कि श्री शब्द तो बहवर्थक है ! पहले आप खुद ही यह निश्चित कर लें कि श्री संज्ञा मात्र है या वर्ग मात्र या फिर कुछ और !

हम तो वेद को ही सर्वोपरि मानने वाले हैं अस्तु वैदिक सन्दर्भ से ही श्री तत्त्व का विवेचन करेंगे -

शुक्ल यजुर्वेद के ३१वें अध्याय के २२वें मंत्र में कहा गया है यथा प्रमाण -

श्रीश्च॑ ते लक्ष्मीश्च॒ पत्न्या॑वहोरा॒त्रे पा॒र्श्वे नक्ष॑त्राणि रू॒पम॒श्विनौ॒ व्यात्त॑म्। इ॒ष्णन्नि॑षाणा॒मुं म॑ इषाण सर्वलो॒कं म॑ इषाण ॥२२॥

निचृदार्षी त्रिष्टुप्। धैवतः ॥

भा०—हे परमेश्वर (श्रीः च) सबको आश्रय देने वाली और (लक्ष्मीः च) सबके बीच में तुझको व्यापक और शक्तिमान् दिखाने वाली, दोनों शक्तियां (ते) तेरी (पत्न्यौ) समस्त संसार को पालन करने हारी होने से तेरी दो स्त्रियों के समान हैं। (अहोरात्रे पार्श्वे) दिन और रात्रि ये दो जिस प्रकार सूर्य से उत्पन्न किये जाते हैं, जब वह प्रत्यक्ष होता है तब दिन और जब वह नहीं प्रत्यक्ष हो तब रात्रि होती है इसी प्रकार हे परमेश्वर ! दिन रात के समान तुम्हारे दो पार्श्व या पासे हैं। जब तुम साक्षात् होते हो तब हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो जाने से दिन के समान हो जाता है। तामस आवरण से जबतुम प्रत्यक्ष नहीं होते तब रात्रि के समान अन्धकार हो जाता है। जिस प्रकार (नक्षत्राणि रूपम्) समस्त नक्षत्र सूर्य के ही रूप हैं, वे सब सूर्य हैं, उसी प्रकार नक्षत्रों के समान सब तेजोमय पदार्थ परमेश्वर के ही अंश हैं।

यह हिंदी अनुवाद पंडित जयदेव शर्मा जी का है जो १९३२ ईस्वी में अजमेर से प्रकाशित किया है।

इसमें स्पष्ट कहा गया कि हे परमेश्वर ! श्री ओर लक्ष्मी आपकी दो पत्नियां हैं ! श्री वो हैं जो समस्त जनों को आश्रय देने वाली हैं ओर लक्ष्मी वो हैं जो आपको व्यापकत्व प्रदान करती हैं।

श्री शब्द का यही अर्थ प्रसिद्द वेद-भाष्यकार महीधर ने भी किया है यथा प्रमाण -

म० ऋषिरादित्यं स्तुत्वा प्रार्थयते । हे आदित्य, श्रीः लक्ष्मीश्च ते तव पत्न्यौ । जायास्थानीये त्वदूस्ये इत्यर्थः । यया सर्वजनाश्रयणीयो भवति सा श्रीः श्रीयतेऽनया श्रीः संपदित्यर्थः । यया लक्ष्यते दृश्यते जनैः सा लक्ष्मीः । सौन्दर्यमि-

श्री शब्द का यही अर्थ पूज्य श्री अग्रदास जी ने स्वरचित ग्रन्थ "रहस्यत्रय" में किया है यथा प्रमाण -

मूल - **तत्र श्रीशब्देन समस्त समाश्रयणीयापरमात्माश्रित निखिलजीव दोष निहंतृ श्रीरामं भगवंतं चेतनाचेतन विज्ञापनं श्रावन्ती स्वगुणैरखिलं विश्वं पूरयती भगवती श्रीसीतोच्यते ॥२॥**

वाल्मीकि रामायण मुक्त कंठ से श्रीविदेहराजकिशोरी सीता जी को सभी श्रियों की मूल श्री के रूप में प्रतिष्ठित करता है यथा प्रमाण -

वसुधाया हि वसुधां श्रियः श्रीं भर्तृवत्सलाम् ।
सीतां सर्वानवद्याङ्गीमरण्ये विजने शुभाम् ॥(श्री वाल्मीकि रामायण ६.१११.२४)

रामरहस्योपनिषद में भी श्री सीता जी को स्पष्ट श्री रूप में ग्रहण किया है।

ध्यानं दशाक्षरं प्रोक्तं लक्षमेकं जपेन्मनुम् ।
श्रियं सीतां चतुर्थ्यन्तां स्वाहान्तोऽयं षडक्षरः ॥ ९४॥

जनकोऽस्य ऋषिश्छन्दो गायत्री देवता मनोः ।
सीता भगवती प्रोक्ता श्रीं बीजं नतिशक्तिकम् ॥ ९५॥

आचारी वैष्णवों की प्रधान संहिता हारीत स्मृति से ही प्रमाण रखते हैं -
वृद्ध हारीत स्मृतिः (अध्याय ३, श्लोक संख्या २४१)
श्रियो रमणसामर्थ्यात्सौन्दर्यगुणगौरवात् ॥
श्रीराम इति नामेदं तस्य विष्णोः प्रकीर्तितम्।
रमया नित्ययुक्तत्वाद्राम इत्यभिधीयते ॥
अर्थात भगवान् का नाम "श्रीराम" इसलिए है क्योंकि ये नाम श्री जी को आपने सौन्दर्य गुण द्वारा रमण कराने में समर्थ है ओर नित्य श्री जी के साथ रमण करने से ही व्यापक परमात्मा का नाम श्रीराम है।

श्रीरामचरितमानस में १२ स्थानों पर श्री सीता जी को श्री कहकर गोस्वामीपाद ने स्मरण किया है यथा प्रमाण -

सती दीख कौतुक मग जाता। आगे राम सहित श्रीभ्राता ॥ (१.१५४.४)
उभय बीच श्री सोहई कैसी। ब्रह्मजीव बिच माया जैसी ॥ (३.७.४)
तदपि अनुज श्री सहित खरारी । बसतु मनसि मम कानन चारी ॥(३.११.१८)
यह बर मागउँ कृपानिकेता । बसहु हृदयँ श्री अनुज समेता ॥(३.३.१०)
रहेहु सजग सुनि प्रभु कै बानी ।चले सहित श्री सर धनु पानी ॥(३.१८.१२)
श्री सहित अनुज समेत कृपा निकेत पद मन लाइहौं । (छन्द १.३.३६)
धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो । (छन्द ६.१०८.६)
हँसे रामु श्री अनुज समेता । परम कौतुकी कृपा निकेता ॥(६.१८.८)
सिंहासन अति उच्च मनोहर । श्री समेत प्रभु बैठे ता पर। (६.१८.४)
आयउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब कोई ॥(७.१.९)
श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई ॥(७.१२.२)
जेहि बिधि कृपा सिंधु सुख मानइ । सोई कर श्री सेवा बिधि जानइ ॥(७.२४.७)

रामचरितमानस में भी श्री गोस्वामी जी ने श्री सम्प्रदाय के रहस्य को उद्घाटित करते हुए कहा है यथा प्रमाण -

* धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो।
जिमि छीरसागर इंदिरा रामहि समर्पी आनि सो॥
सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली।
नव नील नीरज निकट मानहुँ कनक पंकज की कली॥2॥

भावार्थ:-तब अग्नि ने शरीर धारण करके वेदों में और जगत् में प्रसिद्ध वास्तविक श्री (सीताजी) का हाथ पकड़ उन्हें श्री रामजी को वैसे ही समर्पित किया जैसे क्षीरसागर ने विष्णु भगवान् को लक्ष्मी समर्पित की थीं। वे सीताजी श्री रामचंद्रजी के वाम भाग में विराजित हुईं। उनकी उत्तम शोभा अत्यंत ही सुंदर है। मानो नए खिले हुए नीले कमल के पास सोने के कमल की कली सुशोभित हो॥2॥

छन्द ६.१०८.६

यह प्रसंग रामायण में अग्निपरीक्षा प्रकरण का है जहाँ श्री राम जी के समक्ष प्रकट होकर अग्निदेव वेदविश्रुत श्री जी का हाथ श्री राम जी के हाथ में रखते हैं -
यहाँ गोस्वामी जी पुरुषसूक्त के उसी मन्त्र की ओर संकेत कर रहे हैं जो श्री अर्थात श्री सीता जी को लक्ष्मी जी से पृथक रूप में निरूपित करता है।

जो आपका आक्षेप था कि श्री तो लक्ष्मी जी को कहते हैं ओर वही लक्ष्मी जी सीतास्वरूप लेती हैं अस्तु भेद है ही कहाँ केवल अभिन्नता है तो इसका खण्डन तो स्वयं वेद करता है यथा प्रमाण -

सा सर्ववेदमयी सर्वदेवमयी सर्वलोकमयी सर्वकीर्तिमयी
सर्वधर्ममयी सर्वाधारकार्यकारणमयी महालक्ष्मी र्देवेशस्य
भिन्नाभिन्नरूपा चेतनाचेतनात्मिका
ब्रह्मस्थावरात्मा तद्गुणकर्मविभागभेदाच्छरीरूपा
देवर्षिमनुष्यगन्धर्वरूपा असुरराक्षसभूतप्रेत-
पिशाचभूतादिभूतशरीररूपा भूतेन्द्रियमनःप्राणरूपेति च विज्ञायते ।
॥ १० ॥

वे भगवती सीताजी सर्व वेदस्वरूपिणी, सर्वदेवरूपा, सभी लोकों में समान रूप से संव्याप्त,यशस्विनी, समस्त धर्मस्वरूपा, समस्त जीवधारियों एवं समस्त पदार्थों की आत्मा हैं। सभी भूतप्राणियों के कर्म एवं गुण के भेद से सर्वशरीरस्वरूपिणी, मानव, देव-ऋषि, गन्धर्वो की स्वरूपभूता, समस्त विश्वरूपा महालक्ष्मी महानारायण भगवान् से भिन्न होते हुए भी अभिन्न हैं ॥ १० ॥

वेद तो भिन्नता ओर अभिन्नता दोनों की बात करता है।
सभी श्रियों की मूल श्री सीता जी हैं। वो षड्गुणों से सम्पूर्ण हैं। उन्ही के अंश-कलाओं से समस्त लक्ष्मी स्वरूपों का उद्भव होता है। अस्तु अंशी श्री सीता जी हैं और अंश समस्त लक्ष्मी स्वरूप हैं अस्तु अंशी और अंश में जिस प्रकार अभिन्नता होती है वही अभिन्नता श्री सीता और श्रीलक्ष्मी में है।

श्री किशोरी जी ही समस्त लक्ष्मियों की स्त्रोत हैं इसके कुछ प्रमाण हम प्रस्तुत करते हैं - यथा सीतोपनिषदि -

श्रीदेवी त्रिविधं रूपं कृत्वा भगवत्सङ्कल्पानुगुण्येन लोकरक्षणार्थं रूपं धारयति । श्रीरिति लक्ष्मीरिति लक्ष्यमाणा भवतीति विज्ञायते । ॥१६॥

सीताजी ' श्री देवी के त्रिविध रूप में भगवत् संकल्प के अनुसार सर्वलोकरक्षा हेतु महालक्ष्मी के रूप में प्रकट होती हैं और श्री, लक्ष्मी तथा लक्ष्यमाण रूप में प्रतीत होती हैं ॥ १६ ॥

उपरोक्त प्रमाण से सिद्ध हुआ कि श्री सीता जी ही महालक्ष्मी लक्ष्मी आदि सभी स्वरूप धारण करती हैं क्योंकि वे भगवती श्री सीता जी ही मूल देवी हैं जिनकी समस्त वेद वन्दना करता है और यशोगान करता है।

श्रीरामचरितमानस जी स्वयं वेदतुल्य ही है ऐसा शिव जी पहले ही प्रमाणित करचुके हैं अस्तु उसका प्रमाण वादिकप्रमाण के समान ग्राह्य है उसमें कहा है यथा प्रमाण -
बाम भाग सोभति अनुकूला। आदिसक्ति छबिनिधि जगमूला।।
जासु अंस उपजहिं गुनखानी। अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी।।
भृकुटि बिलास जासु जग होई। राम बाम दिसि सीता सोई।। (रामचरितमानस १.१.१४८)

एक ओर वैदिक प्रमाण रखते हैं -

अथर्वण उत्तरार्ध श्रुति -
जनकस्य राज्ञः सद्मनि सीतोत्पन्ना तां सर्वपरां परानंद मूर्तिं गायन्ति मुनयोऽपि देवाश्च कारणकार्याभ्यामेव परा तथैव कारणकार्ये शक्तिर्यस्याः विधात्री गौरीणां सैव कर्त्री सैव रामानन्दस्वरूपिणी जनकस्य योगफलमिव विभाति ॥
अथर्वण के उत्तरार्ध में श्रुति है कि श्री जनक महाराज के गृह में श्री सीतानाम्नी पराशक्ति उत्पन्न हुईं। उन्हीं को परमानन्दमूर्ति कहकर मुनिजन तथा देवगण गान करते हैं। यही कार्य और कारण दोनों से परे हैं, कार्य और कारण दोनों इन्हीं की शक्ति हैं । यही ब्रह्माणी-पार्वती प्रभृति सभी को उत्पन्न करने वाली हैं। यहीं श्रीराम की आनन्द स्वरूपिणी महान आह्लादिनी शक्ति हैं। इनके रूप में श्री जनक जी महाराज का मानों योगफल ही प्रकट है, ऐसी प्रकाशित हो रही हैं॥

सभी श्री भू लीला आदि मुख्य तैंतीस शक्तियाँ श्री किशोरी जानकी जी से प्रकट हुई हैं इसका विस्तृत वर्णन महारामायण में वर्णित है कभी विस्तार से चर्चा अवश्य करेंगे !

अब यहाँ जो श्री शब्द है सो अंशी श्री सीता जी से अभिन्न अंशी-अंश सम्बन्धेन लक्ष्मी जी के लिए प्रयोग हुआ है !
आपने कहा कि श्री राम और श्री विष्णु में तो सर्वथा अभेद है तो यहाँ भी समाधान यही है कि श्री राम और श्री विष्णु में अंशी-अंश सम्बन्ध से ही अभिन्नता है अन्य दृष्टि से नही इसको सिद्ध करने हेतु कुछ प्रमाण रखते हैं यथा प्रमाण -

पुलस्त्य संहितायाम्
सावित्री ब्रह्मणा सार्द्धं लक्ष्मीनारायणेन च
शंभुना राम रामेति पार्वती जपतिस्फुटम्॥

अर्थात सावित्री के सहित ब्रह्माजी, लक्ष्मी के सहित भगवान श्रीमन्नारायण और पार्वती जी के सहित भगवान् शम्भु नित्य रूप से राम नाम का ही जप करते हैं।

वशिष्ठ संहितायाम् वशिष्ठ वाक्यं पाराशर प्रति
नान्यो मंत्रः परो राम मंत्रादष्टाक्षरादिकः। सूर्य्यशक्तिशिवादीनां मंत्राहीनतरास्फुटम् ॥
नारायणः स्वयंभूश्च शिवश्चेन्द्रादयस्तथा। सनकाद्या मुनीन्द्राश्चनारदाद्या महर्षयः ॥
सिद्धाः शेषादयश्चैव लोमशाद्या मुनीश्वराः। लक्ष्म्यादिशक्तयः सर्वा नित्यमुक्ताश्च सर्वदा॥
मुमुक्षवश्च मुक्ताश्च सूरयश्च शुकादयः। तत्प्रभावं परं ज्ञात्वा मन्त्रराजमुपासते ॥

अर्थात रामतारक षडक्षर मन्त्र से परे कोई नारायण अष्टाक्षर मंत्र नही है अर्थात नारायण अष्टाक्षर मन्त्र से भी उत्कृष्ट यह श्री राम मंत्र है तब अन्य सूर्य शक्ति शिव गणपति आदि के मन्त्रों की चर्चा ही क्या ? अस्तु यह निश्चित है कि ये सभी मंत्र श्री राम के बिना शक्तिहीन हैं। स्वयं भगवान नारायण, ब्रह्माजी, शिवजी, इन्द्रादि सभी देवता, सनकादि नारदादि सभी ८८ सहस्त्र महर्षि गण, सिद्धजन, शेषादिक जितने सर्पगण, लोमशादिक मुनीश्वरादि, लक्ष्मी प्रभृति सब शक्तियाँ, सभी नित्यमुक्त ओर मुमुक्षु जन, वामदेवादिक मुक्तजन तथा शुकदेवादिक नित्यसूरि गण इस तारकब्रह्म राममंत्रराज के अतुलित प्रभाव को जानकर इसकी उपासना करते हैं।

अब जब स्वयं भगवान् श्रीमन्नारायण तथा लक्ष्मी जी ही इस राममंत्र की उपासना करते हैं तब कौन किसकी शाखा है यह विद्वज्जनों को समझ लेना चाहिए इसपर हम अधिक नहीं कहेंगे।

हम फिर से दोहरा रहे हैं कि हम किसी भी देवता का अपमान नही कर रहे केवल शास्त्रों से श्री राम जी के परम वैशिष्ट्य की पुनः व्याहृति कर रहे हैं अस्तु इसका अर्थ कोई निंदा में न लेवे क्योंकि रामानंदी तो शक्तिसंगमतंत्रवाक्यानुसार "सर्वत्र समरूपश्च" इन लक्षणों से युक्त होते हैं इसलिए हमारे आराध्य प्रभु श्रीरामचंद्र ही सभी रूपों में व्याप्त हैं।

पुनः शिव संहितायाम् शेष वाक्यं वेदान् प्रति
विष्णुकोटिप्रतीपालं ब्रह्मकोटिविसर्जनम् ।
रुद्रकोटिप्रमर्दं वै मातृकोटिविनाशनम् ॥

अर्थ - रामचंद्रजी कोटि विष्णु के समान पालन कर्त्ता हैं कोटि ब्रह्मा के समान सृष्टि कर्त्ता हैं कोटि शिव के समान संहारकर्ता हैं, कोटि मातृ के समान नाशकर्त्ता हैं।

इसी का अनुवाद गोस्वामीपाद ने रामचरितमानस में किया यथा प्रमाण -

कोटिविष्णु सम पालनकर्ता। रूद्र कोटि शत सम संहर्ता॥

आसीनं तमयोध्यायां सहस्रस्तंभमण्डिते। मण्डपे रत्नसंज्ञे च जानक्या सह राघवम् ॥
मत्स्यकूर्मकिर्य्यनेकौ नारसिंहोऽप्यनेकधा। वैकुंठोऽपि हयग्रीवो हरिः केशववामनौ ॥
यज्ञो <u>नारायणो</u> धर्मपुत्रो नरवरोऽपि च। <u>देवकीनन्दनः कृष्णो</u> वासुदेवो बलोऽपि च ॥
पृश्निगर्भो मधून्माथी गोविंदो माधवोऽपि च। <u>वासुदेवो परोऽनन्तः</u> संकर्षण इरापतिः ॥
प्रद्युम्नोऽप्यनिरुद्धश्च व्यूहास्सर्वेऽपि सर्वदा। <u>रामं सदोपतिष्ठन्ते रामादेशे व्यवस्थिताः</u> ॥
एतैरन्यैश्च संसेव्यो रामो नाम महेश्वरः। तेषामैश्वर्यदातृत्वात्तन्मूलत्वान्निरीश्वरः॥

अर्थ - श्री साकेतपुरी अयोध्याजी में हजारों खंभों से शोभित रत्नमण्डप में जानकीजी के सहित रामजी विराजमान रहते हैं और अनेकों मत्स्य, अनेकों कूर्म, अनेकों वाराह, अनेकों नरसिंह, अनेकों वैकुण्ठ भगवान, हयग्रीव, हरि, केशव, वामन, यज्ञ नारायण, धर्म पुत्र नरश्रेष्ठ भी और देवकी पुत्र कृष्णजी, वासुदेव, बलदेव भी और पृश्निगर्भ, मधुसूदन, गोविंद, माधव भी और वासुदेव भगवान भी, प्रभु अनंत, संकर्षण, लक्ष्मीपति, प्रद्युम्न भी, अनिरुद्ध सहित सारे चतुर्व्यूह सर्वदा श्रीरामजी के सामने खड़े रहते हैं, आज्ञा में स्थित हैं जिनको जो रामजी की आज्ञा होती है वही वे सब करते हैं और अन्य सब श्रीराम नाम रुपी महा ईश्वर की सेवा करते हैं।

भाव यह है कि सब कोई रामनाम जपते हैं उन सब स्वरूपों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले परब्रह्म श्री रामजी सबके मूल कारण हैं और रामजी के ईश्वर कोई नही हैं ॥

पुनस्तत्रैव शिव वाक्यं -

अवतारसहस्राणि शक्तिकोटिशतानि च ॥
इन्द्रकोटिसहस्राणि विष्णुकोटिशतानि च।

श्री रामजी हजारों कोटि अवतार के समान हैं, सौ कोटि शक्ति के समान हैं, हजारों कोटि इन्द्र के समान हैं तथा <u>सौ कोटि विष्णु</u> के समान हैं।

पुनः आनंद संहिता में भी कहा है कि सभी स्वरूपों से परे जो परब्रह्म हैं वो नराकृति द्विभुज परमात्मा हैं और यही हमारे श्री सम्प्रदाय के उपास्य आराध्य भजनीय श्रोतव्य ध्यातव्य

स्मर्तव्य गंतव्य वेदवेद्य राजाधिराज राजराजेश्वर भगवान् श्री रामचंद्र हैं अस्तु श्रीराम का वैशिष्ट्य तो विष्णु से भी अधिक है यह शास्त्र सिद्ध है। आनंद संहितायाम् -

आनन्दो द्विविधः प्रोक्तो मूर्तश्चामूर्त एव च।
अमूर्तस्याश्रयो मूर्तः परमात्मा नराकृतिः॥
स्थूलमष्टभुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम।
परं तु द्विभुजं रूपं तस्मादेतच्चराचरम॥

अर्थ - आनन्द दो प्रकार का होता है एक मूर्त (सगुण) और एक अमूर्त(निर्गुण)। इन दोनों में सगुण रूप निर्गुण रूप का आश्रय है और परमात्मा नराकार हैं। अष्टभुजवाले भूमारूप स्थूल हैं और चतुर्भुज वाले नारायण सूक्ष्म हैं।

भाव - अष्टभुजवाले सगुण हैं चतुर्भुजवाले निर्गुण हैं और नराकार परमात्मा द्विभुज श्री रामचन्द्र जी हैं। इन्ही से चराचर जगत व्याप्त हैं।

हारीत स्मृतौ तृतीय अध्याये श्लोक २४० -

अनन्तो भगवन्मन्त्राः नानेन तु समा कृताः

यहाँ से स्पष्ट है कि श्रीराम जी सभी देवताओं से विशिष्ट हैं यह ऐसा सुनिश्चित करके वेद ने कहा है।

और यदि कहो कि राम जी के नाम रूप गुण लीला धाम का यह माहात्म्य तो केवल आपने इष्ट की महिमा निरूपणार्थ है कोई सार्वभौमिक सत्य नही तो इस अर्थवादपुरस्सर बुद्धि से युक्त अधम लोगों के लिए शिव जी ने क्या कहा है इसको देखिये -

- ब्रह्म संहितायाम् शिव वाक्यं

यन्नामकीर्त्तन फलं विविधं निशम्य न श्रद्दधाति मनुते यदुतार्थवादम्।
यो मानुषस्तमिह दुःखचये क्षिपामि संसार घोर विविधार्त्तिनिपीडितान्नम्॥

शिव जी कहते हैं कि हे पार्वती! श्री राम नाम की अपार महिमा को सुनकर जो जन इसमें अर्थवाद की निष्पत्ति करते हैं (अर्थात इसे केवल प्राकृत भाव में की गयी वन्दना मात्र समझते हैं) उसे मैं दुःखरूपी समुद्र में फेंक देता हूँ ओर उसे संसार के भीतर घोर पीड़ाओं को सहन करना पड़ता है।

अन्त में आपने कहा कि रामानन्दाचार्य जी को रामावतार कहने वाले रामानन्दी उन श्री राम जी को उनके ही सम्प्रदाय से अलग कर रहे हैं नया सम्प्रदाय बतलाकर तो बन्धु! आप अपनी कुत्सित वाणी पर जरा निग्रह करिये! यह बोलकर आप श्रीरामरूप भगवान् श्रीरामानन्दाचार्य जी महाराज का घोर अपमान कर रहे हैं क्योंकि हे मूर्खचक्रचूड़ामणि! अगस्त्य संहिता के भविष्य खण्ड को आपने पूरा पढ़ा होता तो ऐसी बातें न करते यथा प्रमाण -
अगस्त्य संहितायाम् अगस्त्य वाक्यं -

सत्सम्प्रदायाम्बुजभास्करोऽग्रणी
विनीतनीताखिलवाञ्छितार्थकः।
निगूढवेदार्थविदीपनस्तै
रुदारवृत्तैर्महितो महात्मभिः॥15॥

अर्थात श्रीजानकीप्रवर्तित श्रीसम्प्रदाय रुपी कमल को प्रकाशित करने वाले भास्करों में अग्रणी आनंदभाष्यकार भगवान जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्य जी होंगे यह कहकर अगस्त्य महर्षि ने उनका यशोगान किया है।

तो जब शास्त्र ही स्वयं श्री रामानन्दाचार्य भगवान् को श्रीसम्प्रदायरूपी कमल को प्रकाशित करने वाले भास्करों में अग्रणी यह कहकर सम्बोधित कर रहा है तब आपका ऐसा दुस्साहस कि आपने उन्हें किसी अन्य सम्प्रदाय का अनुयायी सिद्ध करने का निन्दित ओर निरर्थक प्रयास किया यह वैष्णव समाज को कदापि सह्य नही है। आचार्य भगवान् हमारे सम्प्रदाय की आत्मा हैं उनकी उदारता केवल पृथिवी पर ही नहीं सभी लोकों में प्रतिष्ठित है इसलिए ही नाभादास जी महाराज ने कहा -
"श्रीरामानन्द उदार सुधानिधि अवनि कल्पतरु" इसलिए आप इस कुत्सित मानसिकता को छोड़ कर परमकारुणिक भगवान् श्रीरामचन्द्र और महाकारुणिक जगदाचार्य श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी के चरणों में क्षमा प्रार्थना करिये अथवा उन महाकालस्वरूप परमरुद्र स्वरूप भगवान् रामचन्द्र का कोप सहने को तैयार रहिये।

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु!

निग्रहाचार्य के भ्रामक एवं प्रमाणशून्य वक्तव्यों का खण्डन

भागवतानन्द का षष्ठम आक्षेप -

हमारे पास एक सुन्दर ग्रन्थ है श्रीसम्प्रदायदिक्प्रदर्शन ! इसमें रामानन्द सम्प्रदाय और रामानुज सम्प्रदाय के मध्य एकता को प्रतिष्ठित किया गया है। इसमें कहा गया है "नारायणपदाभिधेयो दाशरथि राम इति भावः" इससे श्रीराम और नारायण में अभिन्नता सिद्ध की गयी है और श्रीरामार्चनपद्धति के मंगलाचरण में कहा है -

श्रीमन्तं दलितेन्द्रनीलमणिभं भग्नेशकोदण्डकं
रामं निर्जित भार्गवं जनकजा पाङ्गेक्षितं राघवम् ।
शश्वत्पैत्र्यनिदेशपालनपरं रक्षोऽरिकक्षानलं
पूजापद्धतिमर्चितुं वितनुते स्मृत्वायतिक्ष्मापतिम् ।

इति प्रथमपद्ये प्रयुक्तेन यतिक्ष्मापतिशब्देन श्रीरामानुजाचार्य स्मरणरूपमङ्गलं कृत्वैव ग्रन्थारम्भो विहितः । तथा तैरेव स्वनिर्मितवैष्णवमताब्जभास्करग्रन्थे "प्राचार्याचार्यवर्यान् यतिपतिसहितान् प्रोक्तवांस्तत्प्रणम्य" इति पञ्चमपद्ये श्री रामानुजाचार्य सहित पूर्वाचार्य प्रणामकाले तत्रोक्त यतिक्ष्मापतिपदस्यात्र यतिपतिशब्देन विवरणं च कृतमिति श्रीरामानुजसम्प्रदायादपृथगेव श्रीरामानन्दस्वामिसम्प्रदायः।

उक्त श्लोक में स्वामी रामानन्दाचार्य जी ने यतिक्ष्मापति शब्द से श्रीरामानुजाचार्य को प्रणाम किया है और इसी का स्पष्टीकरण स्वनिर्मित वैष्णवमताब्जभास्कर में "यतिपति" शब्द कहकर दिया है।

अब दुर्भाग्य है कि आधुनिक प्रतियों में ये श्लोक हटाते जा रहे हैं लोग क्योंकि श्लोक रहेगा तो लोग देखेंगे और देखेंगे तो पूछेंगे और पूछेंगे तो हमारी पोल खुलेगी तो बोलो ही मत ! यतिपति शब्द का अर्थ कुछ राघवानंद ही करेंगे लेकिन हमने जो कहा कि राघवानंद जी से रहस्यत्रय ग्रहण किया इससे वे भी तो रामानुज के ही अनुयायी थे इसलिए यतिपति से रामानुज ही ग्रहण होंगे। और गुरु परंपरा जो रामार्चन पद्धति में लिखी है स्वामी जी ने वह इस प्रकार है -

रामानन्दबुधो दयाजलनिधिं श्रीराघवानन्दनं
श्रीमन्तं मुनिपुङ्गवं च हरियानन्दं श्रियानन्दकम् ॥
देवानन्दमथो सदागुणगणैराढ्यं मुनीशंवरं
द्वारानन्दमुनिं मुनीश्वरवरं रामेश्वरं सद्गुरम् ॥३॥
श्रीमन्तं मुनिवर्यमेव च सदाचार्यं च गंगाधरं
वन्द्यं तं पुरुषोत्तमं च सदयं, देवाधिपं सद्गुरम् ।

श्री विद्यागुणवारिधिं मुनिवरं श्रीमाधवाचार्यकं
वैराग्यादिनिधिं गुणैकनिलयं श्रीवोपदेवं कविम् ॥४॥
कूरेशं यतिराजमद्भुतगुणं रामानुजं सद्वरं
पूर्णं श्रीमुनि यामुनं मुनिवरं श्रीराममिश्रं तथा ।
श्रीमन्तं मुनिपुण्डरीकनयनं नाथं मुनिं श्रीशठ
द्वेषं श्रीपूतनापतिं जनकजां रामं सदा संश्रये ॥५॥

इति श्रीपराङ्कुश नाथयामुनयतिवरादिपूर्वाचार्यः सह श्रीरामानन्दीयाचार्याणामपृथक्सिद्धः सम्प्रदाय इतिनास्तिसन्देह लेशोऽपि ।

अर्थात इसमें संदेह का लेश भी नही कि रामानुजाचार्य जी का संस्मरण सपूर्वाचार्यान्तर्गत श्रीरामानन्द स्वामी जी ने किया है इसलिए यह परंपरा अविच्छिन्न है इसलिए रामानन्दाचार्य जी की परंपरा श्रीरामानुजाचार्य जी की परंपरा से अभिन्न है सिद्धांत दृष्टया भी, परंपरा दृष्टया भी और हम तो समझते हैं तत्वतः इष्ट उपासना दृष्टया भी क्योंकि हम तो श्रीराम जी में विष्णु जी में भेद ही नही देख पाते लक्ष्मी जी और सीता जी में भेद ही नहीं देख पाते शास्त्र में अनेकानेक ऐसे वचन हैं जो दोनों की तात्त्विक अभिन्नता को प्रतिपादित करते हैं हाँ स्वरूप वैशिष्ट्यप्रकाशनार्थ नामवैशिष्ट्यप्रकाशनार्थ कुछ भेद है ये तो हम स्वीकार करते हैं लेकिन यह कह देना कि बिलकुल ही अलग हैं यह बिलकुल गड़बड़ बात है, आजकल तो एक प्रलाप और चल रहा है कि राम जी भी दो हुए एक तो परात्पर अवतारी वाले हैं वो हमारे हैं और दूसरे अवतार वाले हैं वो तुम्हारे होंगे अब ये तो पांच दस सालों से अलग ही प्रपंच चल रहा है और आगे भी ग्रन्थ में पांच संस्कार जो कहे गए हैं -

तप्तेन मूले भुजयोः समङ्कनं चक्रेण शंखेन तथोर्ध्वपुण्ड्रकम् ।
श्रुतिश्रुतं नाम च मन्त्रमाले संस्कारभेदाः परमार्थहेतवः ॥

तो यहाँ तो शङ्ख चक्र के ही अंकन की चर्चा श्रीरामानन्द स्वामी जी ने की है फिर भी वैशिष्ट्य दिखाने के लिए धनुर्बाण धारण करते हैं कुछ लोग। किन्तु धनुर्बाण तो मस्तक पर धारण करने का विधान है हारीत स्मृति के अनुसार। स्वामी रामानन्द तो राम भक्त होने पर भी कहते हैं कि -

श्रीनारायण कृष्ण माधव हरे गोविन्द दामोदर
श्रीराम क्षणदाचरान्तक विभो लक्ष्मीपते वामन ॥
विष्णोऽधोक्षज वासुदेव नृहरे श्री केशवानन्त हे
श्रीवैकुण्ठ भवाब्धिमग्नमिह मां शीघ्रं चिरायोद्धर॥

और भी वाल्मीकि रामायण में भी "सीतालक्ष्मीर्भवान् विष्णुः" ऐसा कहकर अभेद को प्रतिपादित किया गया है और अगस्त्य संहिता में भी रामजी के चतुर्भुज रूप के ध्यान की चर्चा आयी है अस्तु सभी दृष्टि से दोनों सम्प्रदायों का ऐक्य सिद्ध है। और हमें सुनने में आया कि मलूकपीठाधीश्वर जी ने रामानुज पद्धति से शंख चक्र धारण किया है यदि ऐसा न हो तो इष्ट साक्षी मानकर खण्डन करें।

प्रलापोद्धार -

हर बार की तरह इस बार भी आपका यह आक्षेप पूर्ण रूप से निरर्थक ही सिद्ध है क्योंकि इसमें कोई भी तात्विक प्रश्न आपने नही किये आपको भी इस त्रुटि का बोध हो जाए इसलिए हम उत्तर देते हैं -

प्रथम बात तो यह है कि इस ग्रन्थ "श्रीसम्प्रदायदिक्प्रदर्शन" का अक्षरशः खण्डन रामानंदीय वैष्णव प्रवर श्री स्वामी भगवदाचार्य जी ने उसी समय कर दिया था जिस समय यह छपा था तब तो आपके प्रश्न का कोई अर्थ ही सिद्ध नही हुआ बिना यह जाने कि इसका खण्डन पूर्व में ही हो चुका आपने इसको उद्धृत करने की मूर्खता जो की है वह अत्यंत हास्यास्पद और निरर्थक है। फिर भी सभी वैष्णवों को आपके इस पुनर्प्रलाप से भ्रम न हो इसके लिए आपको उत्तर देते हैं -

१. आपने कहा कि राम पद से नारायण का अभिधान होता है तो इसमें समस्या ही क्या है यह तो है ही क्योंकि साक्षात परिपूर्ण परब्रह्म श्रीराम जी के अंश होने से नारायण नाम भी श्री राम जी का ही है यथा प्रमाण -
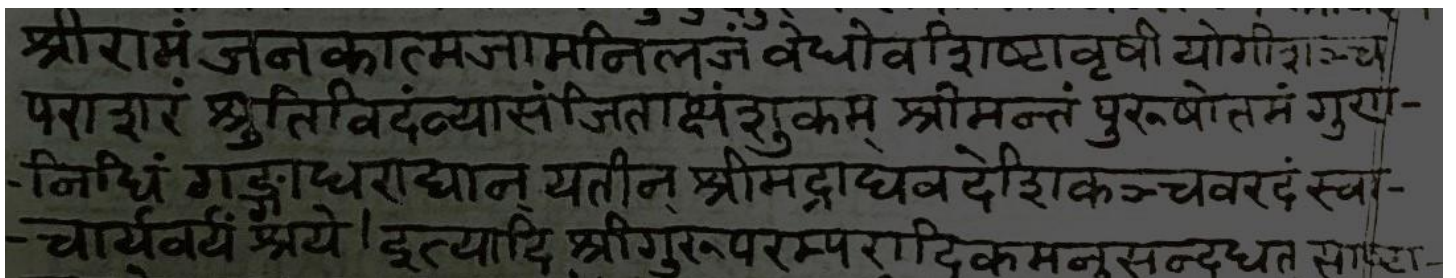
श्रीसनत्कुमारसंहितायाम्
नारायणं जगन्नाथमभिरामं जगत्पतिम् ।
कविं पुराणं वागीशं रामं दशरथात्मजम् ॥

अस्तु आपके इस वाक्य से कुछ सिद्ध नही हुआ उल्टा श्री राम जी की ही महिमा बढ़ी।

२.आपने अगला उद्धरण रामार्चन पद्धति के मंगलाचरण का दिया उससे आपने श्रीस्वामीरामानन्दाचार्यजी जी को रामानुजानुयायी सिद्ध करने का निरर्थक प्रयास किया किन्तु श्रीमान ! यह श्लोक तो पंडित रामटहल दास ने रामार्चन पद्धति में प्रक्षेपित किए क्योंकि जो प्रति रामानन्दीय श्रीवैष्णव मठों में सुरक्षित है वहां तो यह श्लोक ही नही है यथा प्रमाण -

श्रीरामं जनकात्मजामनिलजं वेधोवशिष्टावृषी योगीशञ्च
पराशरं श्रुतिविदं व्यासं जिताक्षं शुकम् श्रीमन्तं पुरुषोत्तमं गुण-
-निधिं गङ्गाधराद्यान् यतीन् श्रीमद्राघवदेशिकञ्चवरदं स्वा-
-चार्यवर्यं श्रये । इत्यादि श्रीगुरुपरम्परादिकमनुसन्दधत साक्षा-

श्रीरामानन्दाचार्य भगवान द्वारा बोली गयी वास्तविक गुरु परंपरा यही है जो ऊपर हमने पांडुलिपि से दिखाई। यह पाण्डुलिपि १७७५ ईस्वी की है

आपने सत्य ही कहा कि लोगों ने श्लोक ही बदल दिए किन्तु वह श्लोक रामानन्द सम्प्रदाय संकरों ने बनाकर डाले हैं न कि रामानन्दीय श्री वैष्णवों ने।

३. आपका अगला प्रश्न रामार्चन पद्धति में गुरु परंपरा को लेकर है हम ऊपर ही प्रमाण दे चुके हैं कि स्वामी जी ने अपनी गुरु परम्परा रामार्चन पद्धति में क्या लिखी है ! यह जो आपने गुरु परम्परा कही है वो गुरुपरम्परा पूर्णतया सत्य नहीं है और सम्प्रदाय संकरों द्वारा इसमें कुछ बदलाव किये गए हैं इसकी सिद्धि हम अब तर्क के माध्यम से करते हैं -
जो गुरु परम्परा आपने कही है वो गुरु परम्परा इस प्रकार है -
१. श्रीराम २. श्रीजानकी ३. विष्वक्सेन ४. शठकोप मुनि ५. नाथ मुनि ५. पुण्डरीकाक्ष ६. राममिश्र ७. यामुनमुनि ८. पूर्णाचार्य ९. रामानुजाचार्य १०. कुरेशाचार्य ११. बोपदेवाचार्य और माधवाचार्य १२. देवाधिपाचार्य १३. पुरुषोत्तमाचार्य १४. गंगाधराचार्य १५. रामेश्वरानंद जी १६. द्वारानन्द जी १७. देवानंद जी १८. श्रियानन्द जी १९. हरियानन्द जी २०. राघवानन्द जी २१. श्रीरामानन्द जी

अब इस गुरु परम्परा का भी विवेचन करते हैं इसमें -
गुरु परम्परा में प्रथम श्री राम और श्रीजानकी जी का नाम है अस्तु यह तो सिद्ध ही है कि इस गुरु परम्परा के आदि आचार्य श्रीसीताराम ही हैं लक्ष्मीनारायण नहीं और यदि कहो कि लक्ष्मीनारायण और सीताराम तो अभिन्न ही हैं तो महाशय ! इसप्रकार तो नारायण शांकर संप्रदाय के भी आदि आचार्य हैं और रामानुजीय परम्परा के भी तो क्या दोनों की एक ही परम्परा है ? अस्तु श्रीसीताराम ही मूल आचार्य हैं राममंत्र के इतना तो यहाँ से सिद्ध हो ही गया अब यह परम्परा तो राम मन्त्र की है इसका अर्थ यह है कि विष्वक्सेन जी से लेकर रामानुज स्वामी और उनके आगे तक सबने राममंत्र ही लिया था यह तो पूरी रामानुजीय परम्परा को ही आपने रामानंदीय श्री वैष्णव संप्रदाय की शाखा सिद्ध कर दिया ! तो जब पूरी रामानुजीय परम्परा ही राम मन्त्र और आचार्य रूप में श्रीसीताराम जी से युक्त है तब उन्हें "लक्ष्मीनाथ समारम्भां" इस स्थान पर "सीतानाथ समारम्भां" ऐसा कहना चाहिए। अष्टाक्षर मन्त्र से भी श्रेष्ठ राम मन्त्र को ग्रहण करना चाहिए किन्तु वे तो ऐसा कभी नहीं करते और न करेंगे ? इस प्रकार आपने इस में कुछ बदलाव किये हैं यह सिद्ध हुआ।

- इस गुरु परम्परा में कूरेशाचार्य के शिष्य माधवाचार्य को कहा है किन्तु माधवाचार्य जी तो पराशर भट्ट के शिष्य थे न कि कूरेष स्वामी के !
- पुरुषोत्तमाचार्य जी को रामानुजाचार्य जी के चौथी पीढ़ी में कहा है किन्तु वे तो रामानुजाचार्य जी से लगभग १६०० वर्ष पूर्व हुए हैं जिन्हें महर्षि बोधायन के रूप में ख्याति प्राप्त है और इन्ही की लिखी हुई ब्रह्मसूत्र वृत्ति प्राप्त करने तो वे काश्मीर शारदा मठ गए थे तब उन्हें रामानुज स्वामी की चौथी पीढ़ी में कैसे रखा जा सकता है ?
- श्रियानन्दाचार्य जी ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार रामानुजाचार्य जी के समकालीन सिद्ध होते हैं किन्तु इस गुरु परम्परा में रामानुज स्वामी जी के नौवीं

पीढ़ी में बताया गया है यह कितनी बड़ी जालसाजी है इसे एक नन्हा बालक भी समझ सकता है।

इसलिए इन सब तर्कों के आधार पर यह सिद्ध हुआ कि यह गुरु परम्परा नकली है और केवल भ्रम फ़ैलाने के लिए संप्रदाय संकरों द्वारा मूल ग्रन्थ में डाली गयी है।

४. आपने कहा कि रामानंदाचार्य जी की परम्परा अविच्छिन्न है वही हम भी कहते हैं कि हमारी परम्परा अविच्छिन्न है आगे अपने कहा कि रामानंदाचार्य जी की परम्परा रामानुजाचार्य जी से अभिन्न है तो हम भी यही कहते हैं कि जिस दृष्टि में शांकर संप्रदाय अथवा माध्व संप्रदाय की परम्परा रामानुज संप्रदाय से अभिन्न है उसी दृष्टि में रामानंदीय श्री वैष्णव परम्परा रामानुजीय परम्परा से अभिन्न है आगे आपने कहा कि ये अभिन्नता सिद्ध है सिद्धांत दृष्टया भी, परम्परा दृष्टया भी, और तत्त्वतः इष्ट उपासना दृष्टया भी किन्तु हम तो यही कहेंगे कि दोनों सम्प्रदायों में महान भेद है सिद्धांत दृष्टया भी, परम्परा दृष्टया भी और तत्त्वतः इष्ट उपासना दृष्टया भी इसकी सिद्धि के लिए सैद्धांतिक पारम्परिक और इष्टोपासना भेद दिखाने वाले तीन प्रमाण प्रस्तुत करते हैं जो सर्वविदित हैं यथा प्रमाण -

- रामानुजीय तिंगल शाखा में लक्ष्मी जीव कोटि में हैं परन्तु हमारे यहाँ श्री सीता जी जीव कोटि में न होकर ब्रह्म कोटि में हैं।

- उनकी परम्परा का आवाहन मन्त्र "लक्ष्मीनाथ समारम्भां" है और हमारी परम्परा का आवाहन मन्त्र "सीतानाथ समारम्भां" है इतना ही स्पष्ट भेद दिखाने हेतु पर्याप्त है।

- उनकी उपासना में आराध्य लक्ष्मी नारायण हैं और मत पांचरात्रिक है मूलमन्त्र अष्टाक्षर है जबकि हमारी उपासना में इष्ट सीताराम हैं जो लक्ष्मी नारायण के भी आराध्य हैं और उन्ही के अंश हैं अस्तु भेद तो है अंशी के साहचर्य से अभिन्नता भी है परन्तु उपासना में महान भेद है हमारा मत वैखानस मत है यद्यपि पांचरात्र भी स्वीकार किया है आचार्य भगवान् ने आनंद भाष्य में हमारा मन्त्र सभी वैष्णव मन्त्रों में श्रेष्ठ सर्वश्रेष्ठ रामतारक षडक्षर मंत्रराज है जिसकी उपासना लक्ष्मी नारायण, गौरीशंकर, सावित्रीब्रह्मा सहित सभी देवी देवता भी करते हैं।

अस्तु यह सिद्ध हुआ कि आनंदभाष्यकार भगवान् श्री स्वामी रामानंदाचार्य जी की परम्परा श्री रामानुजाचार्य जी की परम्परा से भिन्न है सिद्धांत दृष्टया भी और तत्त्वतः इष्ट उपासना दृष्टया भी।

५. आपने कहा कि शास्त्रों में ऐसे अनेकानेक वचन हैं जो दोनों की तात्विक अभिन्नता को प्रकट करते हैं इस पर हम यही कहेंगे कि वह तात्त्विक अभिन्नता केवल श्री राम जी के ही अनुग्रह से है श्री राम जी का ही यह अनुग्रह है कि भक्तों उपासकों के कार्यार्थ वो कल्पना करके कई नारायण, वासुदेव कृष्ण, वराह, नरसिंह आदि रूपों में प्रकट होते हैं यथा प्रमाण -

रामतापनीयोपनिषदि
चिन्मयस्याद्वितीयस्य निष्कलस्याशरीरिणः।
उपासकानां कार्यार्थं ब्रह्मणो रूपकल्पना॥

अर्थात वे चिन्मय शरीरी निष्कल ब्रह्म हैं जो उपासकों के कार्यार्थ अनेकों रूपों में कल्पना करके प्रकट होते हैं।

तो जब राम जी ही नारायण रूप में प्रकट होते हैं तब अभिन्नता तो अंश होने से होगी ही इसमें क्या विवाद है यह तो हम भी स्वीकार करते हैं और आप हमें अभेद बुद्धि रखने की शिक्षा न दें क्योंकि हमारी वैभवशाली परम्परा ऐसी है जो सभी स्वरूपों में राम जी को देखकर उसे नित्य प्रणाम करती है इसलिए यह पाठ आप हमें न पढ़ाएं।

इसलिए श्रीराम जी और श्री नारायण में जो अभिन्नता है वह अंशी-अंश सम्बन्धेन ही है न क्योंकि दो तो हैं ही नही हैं तो केवल एक और वो हैं श्री राम यही श्री राम नारायण होते हैं किन्तु अंश से अंशी का वैशिष्ट्य विशिष्टाद्वैतियों को ही समझ आएगा आप तो वाममार्ग में हैं आपको विशिष्टाद्वैत पढ़ना चाहिए।

६. आपने कहा कि नामवैशिष्ट्य और स्वरूपवैशिष्ट्य प्रकाशनार्थ कुछ भेद है मत भूलिए आपके जैसे ही लोगों के लिए कात्यायन संहिता में कहा है -

अर्थवादं परे नाम्नि भावयन्तीह यो नरः।
स पापिष्ठो मनुष्याणां निरये पतति स्फुटम्॥

आप जो यह अर्थवाद लगा रहे हैं ऐसे अर्थवाद लगाने वालों को पापी और पतित कहा है।

७. आपने कहा कि आजकल एक प्रलाप और चल रहा है कि राम जी भी दो हुए एक तो वो तुम्हारे वाले और एक हमारे वाले तो लगता है आपने श्रीराम जी के तत्त्व को रहस्य ग्रंथों से जानने का प्रयास ही नही किया। पुराणों में आदि से अंत तक हरि का वर्णन किया गया है ऐसा स्वयं वेदव्यास जी का वचन है अब हरि कोई स्वरूप विशेष नाम नही है। यदि रहस्य ग्रंथों को आपने पढ़ा होता तो आप जानते अरे कम से कम आनंद संहिता ही पढ़ लेते यथा प्रमाण -

आनन्दो द्विविधः प्रोक्तो मूर्तश्चामूर्त एव च।
अमूर्तस्याश्रयो मूर्तः परमात्मा नराकृतिः॥
स्थूलमष्टभुजं प्रोक्तं सूक्ष्मं चैव चतुर्भुजम।
परं तु द्विभुजं रूपं तस्मादेतच्चराचरम॥

अर्थ - आनन्द दो प्रकार का होता है एक मूर्त (सगुण) और एक अमूर्त(निर्गुण)। इन दोनों में सगुण रूप निर्गुण रूप का आश्रय है और परमात्मा नराकार हैं। अष्टभुजवाले भूमारूप स्थूल हैं और चतुर्भुज वाले नारायण सूक्ष्म हैं।

भाव - अष्टभुजवाले सगुण हैं चतुर्भुजवाले निर्गुण हैं और नराकार परमात्मा द्विभुज श्री रामचन्द्र जी हैं। इन्ही से चराचर जगत व्याप्त हैं।

८. आपने कहा कि वैष्णवमताब्जभास्कर में शंख और चक्र से अंकित करने की ही बात की गयी है किन्तु संभवतः आपने वही वैष्णवमाताब्जभास्कर पढ़ी जिसमें मूल श्लोक में "शरेण चापेन" इस स्थान पर "चक्रेण शंखेन" इस को जोड़ दिया गया क्योंकि प्राचीन पाण्डुलिपि में "शरेण चापेन" यही पाठ है यथा प्रमाण -

वेद्यं विधेयं चाथ सर्वदा ॥१॥ तप्तेन मूले भुजयोः समङ्कनं
शरेण चापेन तथोर्ध्वपुण्ड्रकम् । श्रुतिश्रुतं नाम च मन्त्र-
-मालिके संस्कारभेदाः परमार्थहेतवः ॥२॥ यतेन्द्रियः शुचिः

और भी शास्त्रों में धनुर्बाण के अंकन के कई प्रमाण हैं उनमें से एक आपके और वैष्णवों के हर्ष के लिए रखते हैं -

अथर्वण श्रुति
ॐ यो वै नित्य धनुर्बाणांकितो भवति स पाप्मानं तरति। स संसारं तरति स भगवदाश्रितो भवति स भगद्रूपो भवतीति अथर्वणीया श्रुतिः॥

जो नित्य धनुर्बाण से अंकित होता है, वह सब पापों से तर जाता है। वह संसार से तर जाता है। वह भगवान का आश्रित हो जाता है। वह भगवान् का रूप ही हो जाता है। ऐसा श्रुति कहती है॥

९. आपने कहा कि श्रीस्वामी रामानन्दाचार्य जी तो भगवान को नारायण कृष्ण माधव गोविन्द आदि नामों से पुकारते हैं अस्तु उनका रामानुज सम्प्रदाय से ऐक्य सिद्ध है अब इस पर हम यही कहेंगे कि शंकराचार्य जी जब यह कहते हैं कि "भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढ़ मते" तो क्या वे भी रामानुज सम्प्रदाय के अनुयायी सिद्ध होंगे और आप भी तो स्वयं राम जी के लिए सहस्त्रश्लोकी स्तुति किये हैं तो क्या आप भी रामानन्दीय श्रीवैष्णव सिद्ध हो गए ? यह कैसी हास्यास्पद बातें कर रहे हैं आप हम तो आपको विद्वान समझते हैं और आप ऐसी बातें कर रहे हैं।

आगे आपने कहा कि अगस्त्य संहिता २५वें अध्याय श्लोक संख्या २४ में राममंत्र जपाधिकार प्रकरण में राम जी का ध्यान चतुर्भुज रूप में बतलाया है वह इस प्रकार है -

ध्यात्वा वीरं परं ब्रह्म राघवं नियतव्रतः[1] ।।24।।
चतुर्भुजं शंखचक्रगदापद्मधरं विभुम्।

अब यहाँ श्रीसम्प्रदाय दिग्दर्शन में लिखा कि केवल यही ध्यान करके षडक्षर मन्त्र जपना चाहिए अथवा अधम गति होगी इसके लिए जो प्रमाण इन्होने रखा वह इस प्रकार है अगस्त्य संहिता अध्याय २५ श्लोक संख्या २३ यथा प्रमाण -

जपं कुर्यात् प्रयत्नेन नो चेत् प्राप्नोत्यधो गतिम्।

किन्तु कितनी मूर्खता का प्रतिपादन यहाँ किया है कि जिस स्वरूप ध्यान के लिए यह उपरोक्त श्लोक आया है वह इस प्रकार है
यथा प्रमाण अगस्त्य संहिता अध्याय २५ श्लोक १८ से २० यथा प्रमाण -

सूर्यमण्डलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम्।।18।।
नमामि पुण्डरीकाक्षमाञ्जनेयगुरुं परम्।
नमः श्रीरामदेवाय ज्योतिषां पतये नमः।।19।।
साक्षिणे सर्वभूतानां परमानन्दरूपिणे।
रघुनाथाय दिव्याय महाकारुणिकाय च।।20।।
नमोऽस्तु कौशिकानन्द दायिने ब्रह्मरूपिणे।[1]।

सूर्यमण्डल के मध्य में अवस्थित सीतासहित कमलनयन श्रीराम को प्रणाम है, जो हनुमान् के परम गुरु हैं। ज्योतिःस्वरूप ग्रहों और नक्षत्रों के स्वामी देवता श्रीराम को प्रणाम है। जो सभी प्राणियों के साक्षी महान् करुणामय दिव्य श्रीरघुनाथ परमानन्द स्वरूप हैं, उन्हें प्रणाम। विश्वामित्र को आनन्दित करनेवाले ब्रह्मस्वरूप श्रीराम को प्रणाम।

और जहाँ चतुर्भुज स्वरूप के ध्यान की चर्चा की गयी है वहीं नीचे के श्लोक में द्विभुज स्वरूप के ध्यान का भी विधान वर्णित है यथा प्रमाण अगस्त्य संहिता अध्याय २५ श्लोक २७ और २८ -

अथवा द्विभुजं देवं[2] नीलोत्पलसमद्युतिम्।
अनेकादित्यसंशोभि[3] पद्मस्योपरिसंस्थितम्।।27।।
काञ्चनप्रख्यया देव्या वामभागस्थयान्वितम्।
लक्ष्मणेन धृतच्छत्रं सुवर्णाभेन धीमता।।28।।
अन्यैश्च सेवितं दिव्यं परिचारैरनेकशः।

अब दो भुजाओं वाले देव श्रीराम का ध्यान करें, जिनकी शोभा नीलकमल के समान है, अनेक सूर्यों की भाँति चमकीले हैं, कमल के आसन पर स्थित हैं। स्वर्ण के समान कान्तिवाली और वामभाग में स्थित श्रीसीता से युक्त हैं। स्वर्ण के समान शोभित, बुद्धिमान् लक्ष्मण श्रीराम के ऊपर छत्र ताने हुए हैं। अन्य परिचारक गण उस दिव्य श्रीराम की सेवा कर रहे हैं।

तो प्रश्न करने वाले ने चतुर्भुज रूप का ध्यान तो बताया किन्तु द्विभुज रूप का ध्यान जो उसके नीचे ही वर्णित है वह नहीं बताया तो यह दोहरे मापदण्ड आखिर क्यों दिखा रहे हैं आप ?

११. अंतिम में आपने कहा कि मलूकपीठाधीश्वर जी ने रामानुज पद्धति से शंख चक्र की दीक्षा ली है अगर ऐसा न हो तो इष्ट साक्षी लेकर खण्डन करें। आपने यह कहकर चरम धृष्टता का परिचय दिया है क्योंकि किसी वैष्णवाचार्य को इष्ट की सौगंध देना केवल उनके चरणों में अपमान ही है। जब किसी की यतिधर्म में दीक्षा होती है तब उसे भगवान् की शपथ दिलाई जाती है। इसके पश्चात उनका गोत्र भगवान् का ही गोत्र - अच्युत गोत्र हो जाता है। तब जो भगवान् के ही गोत्र के हों उन्हें भगवान् की सौगंध देना यह कितना बड़ा निरादर है इसके लिए आपको महान वैष्णवापराध का भागी बनना होगा।
आपने स्वयं ही मलूकपीठाधीश्वर महाराज जी से जाकर यह प्रश्न क्यों नही पूछा इतनी संकीर्णता दिखाकर वीडियो में कुछ भी चिल्ल पों मचा देने से कुछ भी सिद्ध नही होता। महाराज जी ने जो शंख और चक्र लिया भी है वह रामानुज पद्धति से नही लिया। रामानन्द सम्प्रदाय में शंख और चक्र लेने का विधान श्री पीपा जी से आरम्भ हुआ है। भक्तमाल टीकाकार श्रीप्रियादास जी महाराज ने पीपा चरित्र में श्री कृष्ण भगवान् द्वारा उन्हें शंख और चक्र देने का वर्णन स्पष्ट रूप से किया है। और भी श्री स्वामी रामानन्दाचार्य भगवान्

ने धनुर्बाण अङ्कन को मुख्य रखकर पंचायुधों से अंकित होने की बात कही है तब धनुष बाण को मुख्य रूप से ग्रहण कर पञ्चायुध से अंकित होने का विधान तो स्वयं आनंदभाष्यकार भगवान् ने कहा है यथा प्रमाण -

चापादिपञ्चायुधचिह्निताङ्कः समीक्ष्य हृष्टश्च हरिप्रियानथ।
तथा विधानं भक्तिपरः प्रपूजयेत् सुवैष्णवान् जन्मफलादि संस्तुवन्॥ ४६॥

जो भगवान् के धनुर्बाणादि पञ्चायुध से चिह्नित अङ्गवाले, भगवत्प्रिय श्रीवैष्णवजनों को देखकर अत्यन्त उल्लास एवं भक्ति के साथ अपने जन्मफल (भाग्य) की सराहना करता हुआ उनका पूजन करे। (वह वैष्णव है)

शिष्य वही है जो आचार्य के वचनों का अक्षरशः अनुसरण करे आपकी तरह नही कि न जिसका कोई सम्प्रदाय है न कोई गुरु है न कोई विधिवत मन्त्र है इसलिए एक प्रतिष्ठित आचार्य पर आपने आरोप लगाने की जो धृष्टता की है मेरा आपसे आग्रह है कि यह धृष्टता दोबारा दोहराने का विचार आप न करें अथवा आपको बैरागी रामानंदियों के कोप का भागी बनना पड़ेगा।

अंत में यही कहेंगे कि इस श्रृंखला को बनाने का केवल हमारा उद्देश्य है कि सभी रामानंदीय श्री वैष्णव अब जागृत हो जाएं हमारे ही कुछ प्रमाद के कारण पूर्व में सम्प्रदाय संकरों ने ग्रंथों में बदलाव किये अन्यथा बाहरी आलोचकों से हम कभी नही हारे अस्तु आप से यही निवेदन है कि अब जाग जाओ अथवा सम्प्रदाय विरोधी जन हमारे स्थानों पर कब्ज़ा करते ही रहेंगे यदि आपने स्थानों को बचाना है तो अपनी गुरु परम्परा कम से कम जानलो। कम से कम इतना जानलो कि हमारी परम्परा श्रीसीताराम हनुमान जी से है न कि लक्ष्मी नारायण विष्वक्सेन आदि से इसलिए आप सभी सतर्क रहे सावधान रहें और अपनी परम्परा के लिए निष्ठ रहें क्योंकि कृतघ्नता से बड़ा इस संसार में और कोई पाप नही है इस पाप का कोई प्रायश्चित्त ब्रह्मा जी ने भी विधान नही किया है। इसलिए आप आनंद भाष्यकार भगवान् जगद्गुरु श्री स्वामी रामानन्दाचार्य जी के प्रति जो आपका सम्बन्ध है उसकी दिव्यता का अनुभव करें और उन्हें केवल रामावतार कहकर सम्बोधित न करें प्रत्युत उसका बोध करें और जो उन्होंने आनंद भाष्य के पठन पाठन करने का उपदेश किया है उसे स्वीकार करके इस आज्ञा का पालन करें। यदि यह भी न हो सके तो कम से कम मानस का भी अध्ययन करें और श्री राम जी ही परात्पर परब्रह्म हैं उनसे परे कोई और नही है वो अवतारी भी हैं और अवतार भी यह जानें किन्तु हमारी उपासना अवतारी रामजी की उपासना है यह भी समझ लें।

श्रीसीतारामचन्द्रार्पणमस्तु !